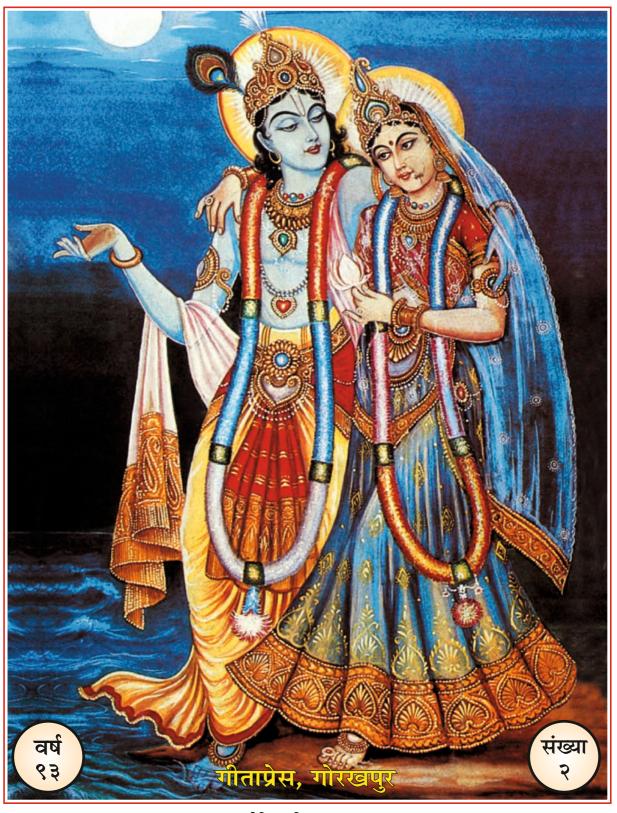
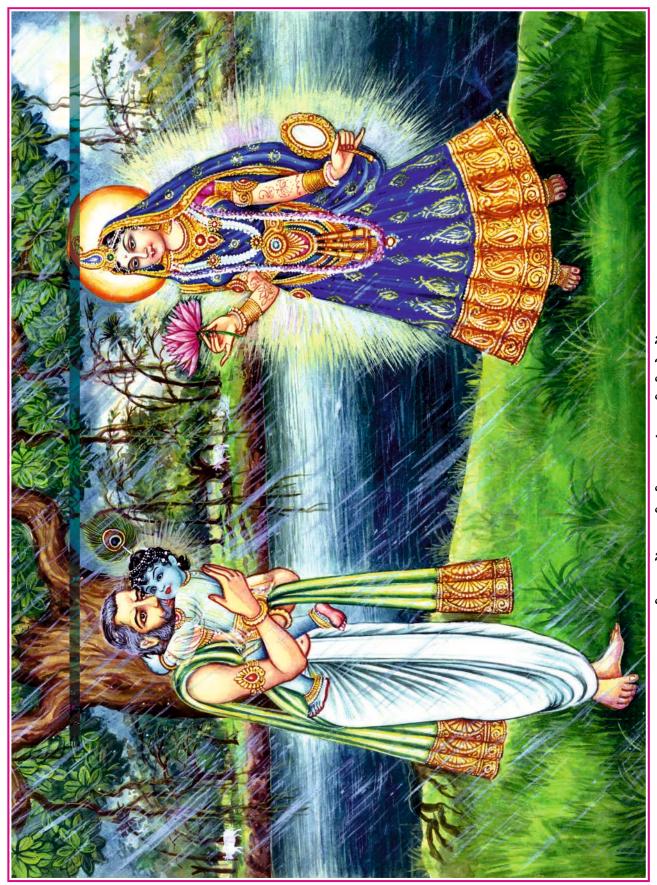
कल्याण



श्रीप्रिया-प्रियतम-युगल





भाण्डीर-वनमें भगवती श्रीराधा एवं नन्दजीकी गोदमें बालक कृष्णा

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाविशाष्यते॥

यजापः सकृदेव गोकुलपतेराकर्षकस्तत्क्षणाद्यत्र प्रेमवतां समस्तपुरुषार्थेषु स्फुरेतुच्छता।

यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः श्रीकृष्णोऽपि तद्द्भतं स्फुरत् मे राधेति वर्णद्वयम्।।

गोरखपुर, सौर फाल्गुन, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, फरवरी २०१९ ई०

संख्या

पूर्ण संख्या ११०७

वर्ष

—— भाण्डीर-वनमें नन्दजीद्वारा श्रीराधासे प्रार्थना —— तत्तेजसा धर्षित आशु नन्दो नत्वाथ तामाह कृताञ्जलिः सन्। अयं तु साक्षात्पुरुषोत्तमस्त्वं प्रियास्य मुख्यासि सदैव राधे॥ गुप्तं त्विदं गर्गमुखेन वेद्यि गृहाण राधे निजनाथमङ्कात्। एनं गृहं प्रापय मेघभीतं वदामि चेत्थं प्रकृतेर्गुणाढ्यम्॥

नमामि तुभ्यं भुवि रक्ष मां त्वं यथेप्सितं सर्वजनैर्दुरापा। श्रीराधाके दिव्य तेजसे अभिभृत हो नन्दने तत्काल उनके सामने मस्तक झुकाया और हाथ जोड़कर कहा—

'राधे! ये साक्षात् पुरुषोत्तम हैं और तुम इनकी मुख्य प्राणवल्लभा हो, यह गुप्त रहस्य मैं गर्गजीके मुखसे सुनकर जानता हूँ। राधे! अपने प्राणनाथको मेरे अङ्कसे ले लो। ये बादलोंकी गर्जनासे डर गये हैं। इन्होंने लीलावश यहाँ प्रकृतिके गुणोंको स्वीकार किया है। इसीलिये इनके विषयमें इस प्रकार भयभीत होनेकी बात कह रहा

हूँ। देवि! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम इस भूतलपर मेरी यथेष्ट रक्षा करो। तुमने कृपा करके ही मुझे दर्शन दिया है, वास्तवमें तो तुम सब लोगोंके लिये दुर्लभ हो'। [गर्गसंहिता,गोलोकखण्ड १६।७—९]

कल्याण, सौर फाल्गुन, वि० सं० २०७५,	श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, फरवरी २०१९	<u></u> \$0
विषय	-सूची	
विषय पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- भाण्डीर-वनमें नन्दजीद्वारा श्रीराधासे प्रार्थना ३	१४– मितव्ययिताका आदर्श	
१- कल्याण ५	(श्रीरमाकान्तजी मिश्र)	२३
३- 'राधा! हम तुम दोउ अभिन्न' [आवरणचित्र-परिचय] ६	१५- प्रयागका कुम्भ एवं अर्धकुम्भ	
४- माधवका माधुर्य	१६- विलक्षण प्रेम और विलक्षण कृपा	
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)७	(श्रीप्रमोदकुमारजी चट्टोपाध्याय)	२६
<- भगवान् श्रीकृष्णका दिव्य श्रीविग्रह (श्री जय जय बाबा) ८	१७- युगलसरकार-प्रार्थना [पद्मपुराण]	38
६- श्रीकृष्ण-लीलानुकरण हानिकारक	१८- श्रीराधामाधवके परम त्यागी भक्त गोस्वा	
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार)१०	रघुनाथदास [संत-चरित]	३५
९- गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य	१९- वृषभानुकिसोरीकी दिव्य छटा	७६
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)१२	२०- 'जिन खोजा तिन पाइयाँ' [कहानी]	
८- रहस्यमयी वार्तामें श्रीराधामाधव	(श्रीसुदर्शनसिंहजी ' चक्र ')	३८
(ब्रह्मलीन स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)१३	२१ – श्रीराधाजीका 'आनन्दचन्द्रिका' नामक स्त	
९- शुद्धि और शृंगार (साधुवेषमें एक पथिक)१५	२२- गोचरभूमिकी गौरव-गाथा (श्रीगौरीशंकर	जी गुप्त)४१
० - सच्चिदानन्दमयी योगशक्ति—श्रीराधा	२३- वृन्दावनका श्रीराधारमणलाल मंदिर	-
(डॉ॰ श्रीकृष्णवल्लभजी दवे)१६	(डॉ० श्रीभागवतकृष्णजी नांगिया)	<i>88</i>
१ - दारुब्रह्म (भगवान् जगन्नाथ)-का प्राकट्य-रहस्य१७	२४- साधनोपयोगी पत्र	<i>88</i>
२- राधाजीद्वारा माधवके अपूर्ण चित्रांकनका रहस्य१९	२५- व्रतोत्सव-पर्व [चैत्रमासके व्रत-पर्व]	४६
३- श्रद्धा-विश्वासपूर्वक काशीवासका फल	२६- कृपानुभूति	४७
(श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)२०		
चित्र-	-सूची	
१ – श्रीप्रिया-प्रियतम-युगल	(रंगीन)	आवरण-पष्ठ
२- भाण्डीर-वनमें भगवती श्रीराधा एवं नन्दजीकी गोदमें बालक कृष		•
३- श्रीप्रिया-प्रियतम-युगल		
४- श्रीमाधवका चित्रांकन करतीं श्रीराधाजी		
५- श्रीराधारमणमन्दिर, वृन्दावनका मुख्य द्वार		83
६- भगवान् राधारमणका श्रीविग्रह	(")	83
		•
जय पावक रवि चन्द्र जयति जय	। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥	
	। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥	
	। गौरीपति जय रमापते॥	पंचवर्षीय शुल्क 🕽
	?	₹ १२५०
शुल्क ∫ पंचवर्षीय US\$	250 (₹15,000) Charges 6\$ Extra	
संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्र ब	द्वेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका	
आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन '	भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार	
	सम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड	
केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के	•	प्रकाशित
		9235400242 / 244
सदस्यता-शुल्क — व्यवस्थापक — 'कल्याण-कार्यालय		

संख्या २] कल्याण कल्याण

याद रखो — जबतक मनमें विषय-सुखमें काम्य वस्तुके प्राप्त न होने या अनुकूल पदार्थके

विश्वास, भरोसा तथा आशा है, तबतक भगवान्का यथार्थ भजन नहीं होगा। मनमें विषय-कामना रहेगी, भोगपदार्थ रहेंगे, अतएव पद-पदपर

फलानुसन्धान बना रहेगा। इससे वह भगवद्भजन न होकर भोग-भजन होगा। भगवान्की स्तुति-प्रार्थना या स्मृति-आराधना होगी तो वह भोग-प्राप्तिके साधनरूपमें ही होगी।

याद रखो-भगवानुकी स्तृति-प्रार्थना या स्मृति-आराधनाका भोगप्राप्तिके साधनरूपमें किया जाना भी न तो पाप है, न त्याज्य है और न वह निष्फल ही होता है, सुतरां किसी भी रूपमें किसी भी हेतुसे भगवत्-स्मरण या भगवदाराधन करना

सर्वथा कर्तव्य ही है तथा परम लाभप्रद भी है; तथापि असली भगवदाराधन या भगवद्भजन तो वही है जो भगवद्भजनके लिये ही होता हो और अपने-आप अविराम रूपसे होता हो। याद रखो-'भजन करना' एक बात है और

'भजन होना' दुसरी बात है। श्वास हम करते नहीं श्वास आते हैं। श्वास लेनेके लिये अभ्यास नहीं करना पडता, न किसी शास्त्राज्ञा या सत्संगकी ही

आवश्यकता होती है। श्वास सहज आते हैं, कभी रुक जाते हैं तो परम व्याकुलता होती है। इसी प्रकार श्वासकी भाँति 'भजन होना' चाहिये। क्षणभर भजन छूटनेपर परम व्याकुलता हो जाय, तभी असली

भजन है। याद रखो-सकाम भावसे भजन करना भी परम लाभप्रद है; परंतु सकाम भावसे भजन

होना प्राय: सम्भव नहीं है। स्मृति रहती है काम्य वस्तुकी, खोज करता है मन निरन्तर काम्य वस्तुकी,

चिन्ता रहती है काम्य वस्तुकी, तब भगवद्भजन

किस मनसे होगा? यहाँतक देखा जाता है कि

नष्ट हो जानेपर भगवद्भजन ही नहीं छूट जाता, भगवानुके अस्तित्वतकसे आस्था उठ जाती है या उठने लगती है। वह इसी कारण कि भजन भगवान्के लिये भगवान्का नहीं हो रहा था। भोगके

लिये भगवान्के नामपर भोगका ही भजन हो रहा था। याद रखो-भोगके लिये भजन करनेवाला इच्छित भोगके प्राप्त होनेपर भी भगवद्भजन नहीं

करेगा; क्योंकि भोगवस्तुकी प्राप्तिसे भोगकामनाका नाश नहीं होता—जैसे अग्निमें घी-ईंधन डालनेपर अग्नि और भी प्रचण्ड हो जाती है और उसका दायरा बढ जाता है तथा उसके लिये और भी अधिक ईंधन-घीकी आवश्यकता हो जाती है,

वैसे ही भोगकामनाकी पूर्तिसे भोगकामना और

भी प्रचण्ड, और भी बृहत् तथा और भी तीव्र

होगी। अतः पहले जो कुछ भगवद्भजन होता था, वह भी फिर नहीं होगा। भोगवस्तुके प्राप्त होनेपर जो सहज भोगक्रिया बढ़ेगी, वह भी भजनमें बाधक ही होगी। याद रखो — विषय-सुखका विश्वास, विषय-सुखका भरोसा, विषय-सुखकी आशा भोगमय संसारसे सम्पर्क नहीं हटने देगी और भोगमय संसारका सम्पर्क

निरन्तर विषयके विश्वास और भरोसेको बढ़ाता रहेगा। इस प्रकार परस्पर एक दूसरेको बढ़ाते हुए भोग-मय संसार और विषय-सुखमें आशा-भरोसा ही जीवनका स्वरूप बन जायगा, जो भयानक दु:खों, आसरी योनियों और भीषण नरकोंकी प्राप्तिका कारण होगा। इसलिये ऐसा प्रयत्न करो, जिससे मनमेंसे

संसार निकल जाय और विषय-सुखसे निराशा हो जाय। 'नैराश्यं परमं सुखम्' यही साधन है। 'शिव'

कल्याण



छलक आये। तब वे श्रीराधाजीसे इस प्रकार मधुर पवित्र वचन बोले— राधा! हम तुम दोउ अभिन्न। बारि-बीचि, चंद्रमा-चाँदनी सम अभिन्न नित भिन्न॥ सत्य सर्वदा सर्वथा रहुँ तुम्हारे आठौं पहर संग सँग डोलूँ, भर्यौ रहूँ अँग अंग॥ मो बिनु तुम्हरी कछू न सत्ता तुम बिनु मैं नाचीज। समुझि न परत रहस्य रंच हु, को तरुवर, को बीज॥

वचनोंको सुनते ही श्रीश्यामसुन्दरके दोनों नेत्रोंमें प्रेमाश्र

चन्द्र-ज्योत्स्नाके समान नित्य भिन्न दीखते हुए भी अभिन्न हैं। मैं नित्य सत्यरूपसे ही सर्वदा सर्वथा तुम्हारे साथ रहता हूँ, आठों पहर ही तुम्हारे साथ-साथ फिरता

राधिके! हम तुम दोनों अभिन्न हैं। जल-तरंग और

हूँ, इतना ही नहीं, तुम्हारे अंग-अंगमें भरा रहता हूँ— समाया रहता हूँ। मेरे बिना तुम्हारी कुछ भी सत्ता नहीं

है और तुम्हारे बिना मैं भी कोई वस्तु नहीं हूँ। यह रहस्य तिनक भी समझमें नहीं आता कि हम दोनोंमें कौन वृक्ष है और कौन बीज?

बिरह-मिलन दोउ रस हम दोउन के हैं लीला-साज। एक नित्य रस बिबिध रूप धरि क्रीड़त सहित समाज॥

नित अनादि, आरंभ न कबहूँ, कबहुँ न उपसंहार॥ बिछुरन-मिलन तुम्हारौ मेरौ, नित्य मिलन के माँहि।

जा बिछुरनमें मिलन मनोहर, सो तो बिछुरन नाहिं॥

विरह (विप्रलम्भ) और मिलन (सम्भोग) दोनों ही रस हम दोनोंकी लीलाके ही उपकरण हैं। वस्तृत: एक ही नित्यरस विविध रूप धारण करके लीलासमाजके साथ क्रीड़ा कर रहा है। नित्य एक ही रसतत्त्व नित्य

अनेक सजकर विचित्र विहार कर रहा है। यह नित्य

विहार अनादि है, इसका न कभी आरम्भ है और न कभी उपसंहार। तुम्हारा और मेरा यह बिछुड़ना-मिलना नित्य मिलनके ही अन्तर्गत है। जिस बिछुड़नेमें मनोहर मिलन

होता है, वह बिछुड़ना नहीं है। मेरे रस तें तुम रसमिय, मैं तुम्हरे रस रसवान। एक स्व-रस कौं द्विविध भेद तें करै नित्य हम पान॥

अगम्य

रस-रीति।

रसपान, रसिक, रसदाता—एक परम रसरूप। अचिंत्य अनिर्वचनीय न कतहुँ तुम्हारौ-मेरौ पलक बिछोह-बियोग। सत्य अनिवार्य अलौकिक अविच्छेद्य

प्रिये! न तोहि स्वरूपकी विस्मृति नहीं कबहुँ कछु खेद। परम रस सरिताके ही वे तरंगमय भेद॥ मेरे रससे तुम रसमयी हो और तुम्हारे रससे मैं

रसवान् हूँ। (तुम्हारा-मेरा एक ही रस है) एक ही अपने ही रसको दो प्रकारके भेदोंसे हम दोनों नित्य पान करते हैं। यह रस, रसपान, रसिक, रसदाता—सब एक ही परम

रसरूप हैं और वह परमाश्चर्यमय, अचिन्त्य, अनिर्वचनीय,

अगम्य और अनुपम रस है। तुम्हारा और मेरा कभी कहीं

पलभर भी बिछोह या वियोग नहीं है। हमारा यह नित्य, सत्य, अनिवार्य, अप्राकृतिक तथा अट्ट संयोग है। प्रियतमे! न तो तुम्हें कभी स्वरूपकी विस्मृति है, न कभी कुछ खेद

ही है। ये तो एक ही परम रस-सरिताके तरंगमय भेद हैं।

आप्यायित भये, महाभाव रसराज की

मिले

दिव्य अतुल अकल यह प्रीति॥ तदनन्तर दोनों ही (श्रीराधा-माधव) आप्यायित

होकर दिव्य रसकी रीतिके अनुसार मिले। महाभाव (श्रीराधा) और रसराज (श्रीश्यामसुन्दर) की यह प्रीति

निमांग राखां इति क्रिकट अपेक्ट सिक्ट क्रिक्त हे ज़िल्ह देखा स्वीत क्रिक्त क्र क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त

माधवका माध्ये माधवका माधुर्य (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) जो नृत्य, गान, वंशीवादन आदि होता था, वह सब भी वैसे ही श्रीराधिकाजी एवं गोपियोंको सुख पहुँचानेके लिये, अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते॥ चिल चिल जात निकट स्रवनिन के, उलिट पलिट ताटंक फँदाते। उनका प्रेम बढानेके लिये ही होता था। श्रीराधिकाजी एवं रासलीलाका विषय अत्यन्त 'सुरदास' अंजन गुन अटके, नतरु अबहिं उड़ जाते॥ श्रीसूरदासजीके इस पदका अर्थ तीन प्रकारसे रहस्यमय है। हमलोगोंकी साधारण बुद्धिके द्वारा इसका किया जा सकता है—एक तो यह कि मानो श्रीराधिकाजी समझमें आना अत्यन्त कठिन है। भगवान्की दयासे तो भगवान् श्रीकृष्णके रूपको देख-देखकर उन्मत्त हो रही मनुष्य भले ही समझ जाय, पर है यह बुद्धिकी समझसे हैं, उस समय राधिकाजीके नेत्रोंकी क्या दशा है— परेकी बात। भगवान्की आह्लादिनी शक्ति होनेके कारण उसका वर्णन सूरदासजी करते हैं। श्रीराधिकाजीको भगवान्का स्वरूप ही मानना चाहिये, दूसरा यह कि मानो श्रीकृष्णभगवान् श्रीराधिकाजीके उन्हें जीव नहीं मानना चाहिये। श्रीकृष्णकी रासलीला रूपको देख रहे हैं, उस समयके उनके नेत्रोंकी शोभाका बिलकुल विशुद्ध है। इस रासलीलाके प्रति विशुद्ध प्रेमभाव हो तो भगवान्से शीघ्र प्रेम हो सकता है एवं कामभाव यदि कहीं छिपा हुआ हो तो वह भी भगवान् तीसरा यह कि सूरदासजी स्वयं भगवान्के दर्शन करते हुए अपने नेत्रोंकी वृत्तिका वर्णन करते हैं। श्रीकृष्णके प्रभावसे नष्ट हो सकता है। परंतु तीनोंमेंसे पहला अर्थ मानना ही अधिक अतएव भगवान्में विशुद्ध प्रेम करनेके लिये प्राणपर्यन्त अनुकूल प्रतीत होता है। वास्तवमें क्या बात है-यह तो चेष्टा करनी चाहिये। भगवान् श्रीकृष्णकी मनमोहिनी

भगवान् जानें। पूर्वापरके पद सामने रहें तो अनुमान

मूर्तिको सब जगह देखते हुए काम करे। जैसे पतिव्रता स्त्री अपने पतिकी ओर देखती हुई पतिके इच्छानुसार सब काम करती है, उसी भाँति उन भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र मोरमुकुटधारी, वंशीवटविहारीकी माधुरी मूर्तिको अपने नेत्रोंके सामने देखता हुआ काम करता रहे। जहाँ-जहाँ नेत्र जायँ वहाँ-वहाँ ही श्रीवासुदेव श्यामसुन्दरकी मूर्तिका चिन्तन करते हुए, मनको भगवान्में रखते हुए सांसारिक काम करता रहे। इससे साधन परिपक्व हो जाता है। उसे एक श्रीकृष्ण भगवान्के सिवा और कुछ नहीं भासता और वह आनन्दमें ऐसा मगन हो जाता है कि उसे आगे जाकर अपने शरीरका भी भान नहीं रहता। वह गोपियोंकी भाँति मुग्ध हो जाता है। भगवान् बडे प्रेमी हैं। जो ऐसे भगवान्की मित्रता छोड़कर सांसारिक तुच्छ स्त्री और अपने शरीरका दास होकर उनमें प्रेम करता है, वही पश् है। जो भी कुछ सांसारिक वस्तुएँ देखनेमें आती हैं, सब नाशवान् हैं, ऐसा जानकर इनसे प्रेम छोड़कर सत्यस्वरूप भगवान्से ही प्रेम करना चाहिये। क्योंकि भगवान् तो केवल प्रेम ही चाहते हैं।

पदका शब्दार्थ इस प्रकार किया जा सकता है— 'अहो! श्रीराधिकाजीके नेत्ररूपी खंजन पक्षी भगवान् श्रीकृष्णके रूप-रसको पी-पीकर मतवाले हो रहे हैं; ये बड़े सुन्दर और चपल हैं, अत: पलकरूप पिंजरेमें नहीं समाते हैं। अर्थात् उस समय नेत्रोंकी पलकें पड़नी बन्द हो गयी हैं। ये इधर-उधर उछलते हुए मानो कानोंके पास जा रहे हैं। यदि इनके अंजनका पट लगा हुआ नहीं होता तो सम्भव है, ये अवश्य उड जाते। यानी श्रीकृष्णके स्वरूपमें जा मिलते।' भगवान् श्यामसुन्दरकी मोहिनी छिबके आगे नेत्रोंकी पलक गिरती नहीं, बल्कि आँखें उनके स्वरूपका पान करती ही रहती हैं। भावकी बात है। विशुद्ध और उच्चकोटिकी श्रद्धा तथा प्रेम हो तो उपर्युक्त बातें घट सकती हैं। श्रीराधिकाजी भगवान्की उच्चकोटिकी प्रेमिका हैं। ये भगवान्की आह्लादिनी शक्ति हैं। भगवान्को हरदम प्रसन्न रखना ही इनका काम है। भगवान्का रासलीलामें

करनेमें अधिक सहायता मिल सकती है।

संख्या २]

वर्णन है।

खंजन नैन रूप रस माते।

भगवान् श्रीकृष्णका दिव्य श्रीविग्रह

(श्री जय जय बाबा)

भगवान् श्रीकृष्ण साक्षात् पूर्ण ब्रह्मके अवतार हैं या

अनन्त सौन्दर्य और माधुर्यकी एक छोटी-सी नगण्य

यों किहये कि साक्षात् पूर्ण ब्रह्म ही श्रीकृष्ण-रूपमें प्रकट

ग्रन्थ श्रीमद्भागवत, महाभारतादि भरे पड़े हैं। भगवान्

श्रीकृष्णकी इन्हीं मधुर लीलाओंके प्रसंगमें उद्धवजी

विस्मापनं स्वस्य च सौभगद्धेः

स्वयोग-

मायाबलं दर्शयता गृहीतम्।

परं पदं भूषणभूषणाङ्गम्।।

भगवान् श्रीकृष्णने अपनी योगमायाका प्रभाव

दिखानेके लिये मानव-लीलाओंके योग्य जो दिव्य

श्रीविग्रह प्रकट किया था, वह इतना सुन्दर था कि

उसे देखकर सारा जगत् तो मोहित हो ही जाता

था, वे स्वयं भी उसे देखकर विस्मित हो जाते

थे। सौभाग्य और सौन्दर्यकी पराकाष्ठा थी इस

रूपमें। उससे आभूषण (अंगोंके गहने) भी विभूषित

श्रीविग्रहका सौन्दर्य इतना अलौकिक था कि उनके

अंगोंके आभूषण मानो उनकी रूप-छटासे स्वयं ही

आजतक किसी पांचभौतिक शरीरमें देखनेको नहीं

मिला। तभी तो धर्मराज युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें

जब भगवान्के उस नयनाभिराम रूपपर लोगोंकी दृष्टि

पड़ी थी, तब त्रिलोकीने यही माना था कि मानवसृष्टिकी

रचनामें विधाताकी जितनी चतुराई है, सब इसी रूपमें

आज भी संसारमें जहाँ-जहाँ स्त्री-पुरुषोंका जो

अभिप्राय यह है कि भगवान् श्रीकृष्णके

भगवान् श्रीकृष्णके श्रीविग्रह-जैसा सौन्दर्य

विदुरजीसे कहते हैं-

हो गये।

अलंकृत हो रहे थे।

पूरी हो गयी है^१।

यन्मर्त्यलीलीपयिकं

हुए हैं। उनके दिव्य गुण, प्रभाव, ऐश्वर्य एवं आश्चर्यमयी

अलौकिक उपदेशप्रद मधुर लीलाओंसे हमारे प्राचीन सौन्दर्य कुछ भी नहीं है; क्योंकि वह प्रतिक्षण

झलक ही है। प्राकृतिक गुणोंद्वारा निर्मित शरीरोंका

(श्रीमद्भा० ३।२।१२)

अनुपम सौन्दर्य देखनेको मिलता है, वह उस मोहनके

िभाग ९३

बदलनेवाला और असत् है, फिर भी मोहके कारण

बनाया हुआ नहीं था। इसे तो उन्होंने अपने संकल्पमात्रसे

अपने भक्तोंको प्रसन्न करनेके निमित्त प्रकट किया था।

जैसा कि ब्रह्माजी भक्तवत्सल भगवान् श्रीकृष्णकी स्तुति

अस्यापि देव वपुषो मदनुग्रहस्य

नेशे महि त्ववसितुं मनसान्तरेण

भगवान् श्रीकृष्णका श्रीविग्रह प्राकृतिक गुणोंद्वारा

स्वेच्छामयस्य न तु भूतमयस्य कोऽपि।

साक्षात् तवैव किमुतात्मसुखानुभूतेः॥

स्वयंप्रकाश परमात्मन्! आपका यह श्रीविग्रह

भक्तजनोंकी लालसा—अभिलाषा पूर्ण करनेवाला है।

यह आपकी चिन्मयी इच्छाका मूर्तिमान् स्वरूप मुझपर

साक्षात् कृपाप्रसाद है। मुझे अनुगृहीत करनेके लिये

ही आपने इसे प्रकट किया है। कौन कहता है कि

यह पंचभूतोंकी रचना है? प्रभो! यह तो अप्राकृतिक शुद्ध सत्त्वमय है। मैं या और कोई समाधि लगाकर

भी आपके इस सिच्चदानन्द-विग्रहकी महिमा नहीं

जान सकता, फिर आत्मानन्दानुभवस्वरूप साक्षात्

आपकी महिमाको कोई एकाग्र मनसे भी कैसे जान

पादान-कारण हैं। जैसे घड़ेका निर्माण करनेके लिये

कुम्भकार निमित्तकारण है तथा जिस सामग्री [मिट्टी]-

से घडा बनाया जाता है, वह उपादानकारण कहलाता

है। परंतु भगवान् कृष्णके लिये सृष्टिनिर्माणहेतु उपर्युक्त

भगवान् श्रीकृष्ण सृष्टिरचनाके अभिन्ननिमित्तो-

(श्रीमद्भा० १०।१४।२)

लोग उनमें आसक्त हो रहे हैं।

करते हुए कहते हैं-

सकता है?

१-यद्धर्मसूनोर्बत राजसूये निरीक्ष्य द्रक्स्वस्त्ययनं त्रिलोक:। कात्स्न्येन चाद्येह गतं विधातुरर्वाक्सृतौ कौशलिमत्यमन्यत॥ (श्रीमद्भा० ३।२।१३)

	का दिव्य श्रीविग्रह

दोनों कारणोंकी आवश्यकता नहीं है। वे अपनी	कानोंके रास्ते हृदयमें प्रवेश करके एक-एक अंगके ताप
इच्छामात्रसे (अपने संकल्पमात्रसे) सृष्टिका निर्माण	तथा जन्म-जन्मकी जलन बुझा देते हैं तथा अपने रूप-
करनेमें समर्थ हैं। निम्न पंक्तियोंमें इसी तथ्यको स्पष्ट	सौन्दर्यको, जो नेत्रवाले जीवोंके नेत्रोंके लिये धर्म, अर्थ,
करनेका प्रयास किया गया है—	काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थींके फल एवं स्वार्थ-
विधीयते यद् यदुनन्दनेन	परमार्थ सब कुछ हैं, श्रवण करके प्यारे अच्युत! मेरा
नापेक्षते तत्र सहायशक्तिः।	चित्त लज्जा, शर्म सब कुछ छोड़कर आपमें ही प्रवेश कर
पाञ्चालबालाञ्चलदीर्घताया	रहा है!'
न तत्र तन्तुर्न च तन्तुवायः॥	रासक्रीडाके अवसरपर गोपियोंको यह अभिमान
अर्थात् भगवान् श्रीकृष्ण जो भी रचना करना	हो गया था कि हम संसारभरकी स्त्रियोंसे श्रेष्ठ हैं।
चाहते हैं, उसके लिये उनको किसी भी बाह्य सहायताकी	गोपियोंके इस गर्वको मिटानेके लिये भगवान् कृष्ण
आवश्यकता नहीं है; क्योंकि द्रौपदीका चीर बढ़ानेके	रासमण्डलसे तत्काल अन्तर्धान हो गये ^१ । उसके बाद
लिये उनको न तो सूतकी आवश्यकता पड़ी और न ही	गोपियोंके विलाप और करुणक्रन्दनको सुनकर भगवान्
सूत बुननेवाले जुलाहेकी। इतने बड़े विश्वब्रह्माण्डकी	श्रीकृष्ण उन गोपियोंके बीच ही आविर्भूत हो गये। उस
रचना जिन्होंने केवल अपने संकल्पमात्रसे कर डाली,	समय उनका अनुपम सौन्दर्य बताते हुए शुकदेवजी राजा
उनको किसी भी उपादानकी क्या आवश्यकता हो	परीक्षित्से कहते हैं—
सकती है, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। भागवतकार	तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः।
कहते हैं—	पीताम्बरधरः स्त्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः॥
'न विस्मयोऽसौ त्विय विश्वविस्मये'	(श्रीमद्भा० १०।३२।२)
(श्रीमद्भा० ३।१३।४३)	ठीक उसी समय उनके बीचोबीच भगवान् श्रीकृष्ण
अत: भगवान् श्रीकृष्णने जो ऐसा अनुपम सौन्दर्यवाला	प्रकट हो गये। उनका मुख–कमल मन्द–मन्द मुसकानसे
श्रीविग्रह स्वयं धारण कर लिया, इसमें आश्चर्यकी बात	खिला हुआ था। गलेमें वनमाला थी, पीताम्बर धारण
ही क्या हो सकती है?	किये हुए थे। उनका यह रूप क्या था, सबके मनको
रुक्मिणीजीने भगवान् श्रीकृष्णको कभी नहीं देखा	मथ डालनेवाले कामदेवके मनको भी मथनेवाला था।
था, परंतु केवल उनके अद्भुत सौन्दर्यकी बात सुनकर ही	अत: हम भी उसकी अलौकिक रूप-माधुरीकी
अपने–आपको उनके समक्ष समर्पित कर दिया। भगवान्को	छवि–छटाको, जो अपने मोहक संगीत और कलित
भेजे हुए अपने सन्देशमें रुक्मिणीजी कहती हैं—	क्रीडाद्वारा सबके चित्तको आकर्षित करनेवाला है,
श्रुत्वा गुणान् भुवनसुन्दर शृण्वतां ते	मानवमात्रके चरम लक्ष्य परमपदको देनेवाला है, वैसे
निर्विश्य कर्णविवरैर्हरतोऽङ्गतापम्।	पूर्णेन्दुसुन्दरमुख और अरविन्द-जैसे नेत्रवालेको हमेशा-
रूपं दृशां दृशिमतामखिलार्थलाभं	हमेशाके लिये अविस्मरणीय बना लें तथा अपने-
त्वय्यच्युताविशति चित्तमपत्रपं मे॥	आपको उसीमें अद्वैत एवं अभिन्न कर लें; यही तो
(श्रीमद्भा० १०।५२।३७)	उस अप्रतिम श्रीविग्रहके रूप-माधुर्यकी आध्यात्मिक
'त्रिभुवनसुन्दर! आपके गुणोंको, जो सुननेवालोंके	परिणति है।
	
१-एवं भगवतः कृष्णाल्लब्धमाना महात्मनः। आत्मानं मेनिरे तासां तत् सौभगमदं वीक्ष्य मानं च केशवः। प्रशमाय	स्त्रीणां मानिन्योऽभ्यधिकं भुवि॥ प्रसादाय तत्रैवान्तरधीयत॥ (श्रीमद्भा० १०। २९। ४७-४८)

श्रीकृष्ण-लीलानुकरण हानिकारक (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार) जो लोग श्रीकृष्णका स्वाँग सजकर गोपीभावसे स्वयं भगवान् हैं। उनका शरीर पांचभौतिक—मायिक स्त्रियोंसे पूजा कराते हैं, मेरी तुच्छ समझसे वे बड़ी भारी नहीं है, वे नित्य सिच्चदानन्द-विग्रह हैं और गोपीजन भी भूल करते हैं। यह सत्य है कि यह सारा जगत् दिव्यशरीरयुक्ता साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णकी स्वरूपभूता परमात्माकी अभिव्यक्ति है, इसके निमित्तोपादान कारण ह्लादिनी शक्तिकी घनीभूत दिव्य मूर्तियाँ हैं। पद्मपुराणमें श्रीगोपीजनके सम्बन्धमें कहा गया है— परमात्मा ही होनेसे यह परमात्मस्वरूप ही है और इस दृष्टिसे देवता, मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंग—सभीको गोप्यस्तु श्रुतयो ज्ञेया ऋषिजा देवकन्यकाः। परमात्माका स्वरूप समझना आवश्यक है; परंतु परमात्माका """राजेन्द्र न मानुष्यः कदाचन॥ यह पूर्ण रूप नहीं है। यह तो अंशमात्र है। यद्यपि सब 'गोपियोंको श्रुतियाँ, ऋषियोंका अवतार, देवकन्या और गोपकन्या जानना चाहिये। वे मनुष्य कभी नहीं हैं।' कुछ परमात्मा है, किंतु परमात्मा यह 'सब कुछ' ही नहीं है—परमात्मा इस 'सब कुछ' से परे अनन्त है और वह अखिलरससागर रसराजशिरोमणि जगत्पति

अनन्त परमात्मा श्रीकृष्णका ही स्वरूप है, इससे श्रीकृष्णसे ही सबमें व्याप्त हैं—यह ठीक ही है। मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना। (गीता ९।४) भगवान् श्रीकृष्णने कहा ही है—'मेरी अव्यक्त

मूर्तिसे(परमात्मा विभुसे) सारा जगत् व्याप्त है।' परंतु यही (जगत् ही) श्रीकृष्ण नहीं है। अतएव श्रीकृष्णका स्वाँग रासलीलाके खेलमें चाहे आ सकता है; परंतु कोई पिछले तीनों वर्गींकी गोपिकाएँ 'साधनसिद्धा' हैं। नित्य-मनुष्य वस्तुत: श्रीकृष्ण बनकर लोगोंसे अपनेको पुजवाये,

यह तो बहुत ही अनुचित है और पूजनेवाले भी बड़ी भूल करते हैं। माना कि स्त्रियाँ श्रद्धालु हैं, भले घरोंकी हैं और शुद्ध भावसे ही ऐसा करती हैं; परंतु यह क्रिया वास्तवमें आदर्शके विरुद्ध और हानिकारक है। यह भी

तो बिगड़ता ही है और यदि वे साधक हैं तो इस निर्विकारताका बहुत दिनोंतक टिकना भगवान्की असीम कुपासे ही सम्भव है। ऐसी स्थितिमें जो लोग शुद्ध भावसे इस कार्यका प्रतिवाद करते हैं, वे न तो कोई दोष करते

माना कि महात्मा निर्विकार हैं; परंतु उनका भी आदर्श

श्रीभगवान्की प्रेयसी इन महाभाग्यवती दिव्यविग्रहधारिणी

भगवान् श्रीकृष्णके साथ दिव्य लीला-विलास करती हैं। कुछ पूर्वजन्ममें श्रुतियोंकी अधिष्ठात्री देवता हैं, जो 'श्रुतिपूर्वा' कहलाती हैं; कुछ दण्डकारण्यके सिद्ध ऋषि हैं, जो 'ऋषिपूर्वा' के नामसे ख्यात हैं और कुछ स्वर्गमें रहनेवाली देवकन्याएँ हैं, जो 'देवीपूर्वा' कहलाती हैं।

गोपियोंमें कुछ तो 'नित्यसिद्धा' हैं, जो अनादिकालसे

सिद्धा गोपीजनोंमें श्रीराधाजी मुख्य हैं और चन्द्रावलीजी, ललिताजी, विशाखाजी आदि उन्हींकी कायव्यूहरूपा हैं; ये 'गोपकन्या' कहलाती हैं। साधनसिद्धा गोपियाँ पूर्वजन्ममें श्रीकृष्ण-सेवा-लालसासे साधनसम्पन्न होकर इस जन्ममें गोपीगृहोंमें अवतीर्ण हुई थीं और नित्यसिद्धा गोपीजनोंके सत्संग, सहयोग और सेवनसे दिव्यरूपताको पाकर इन्होंने श्रीकृष्णका दिव्य चरण-सेवाधिकार प्राप्त किया

था। न तो ये गोपियाँ परस्त्रियाँ थीं और न अखिल

विश्वब्रह्माण्डके स्वामी, आत्माओंके आत्मा भगवान् श्रीकृष्ण ही परपुरुष या उपपति थे। प्रेम-रसास्वादनके हैं और न अनुचित ही करते हैं। मेरी समझसे यदि उनका लिये—प्रेममार्गके साधनकी अत्युच्च भूमिकाके शिखरपर भाव द्वेषरहित और शुद्ध है तो वे पापके भागी नहीं होते। महात्माओंको भगवत्कृपासे जो सिद्धिरूपा चरमानुभूति होती है, उसी अतुलनीय दिव्य प्रेमका वितरण करनेके श्रीकृष्ण मेरी समझसे महापुरुष या सिद्ध महात्मा

ही नहीं हैं। वे साक्षात् परब्रह्म, पूर्णब्रह्म समातन पुरुषितम लिये जगत्पति ने उपपति का और उनकी नित्यसिंगनी

श्रीकृष्ण-लीलानुकरण हानिकारक संख्या २] नित्यकान्तास्वरूपा शक्तियोंने 'परस्त्री'का साज सजा लोहमय्या पुरुषमालिंगयन्ति स्त्रियं च पुरुषरूपया सूर्म्या। अर्थात् 'कोई पुरुष यदि अगम्या स्त्रीमें गमन करता था। यह रास—यह गोपी-गोपीनाथका मिलन हमारे मिलन मिलनकी तरह गंदे कामराज्यकी वस्तु नहीं है, है अथवा कोई स्त्री अगम्य पुरुषसे गमन करती है (अगम्य पांचभौतिक देहोंके गंदे काम-विकारका परिणाम नहीं वही है, जिससे विवाह न हुआ हो) तो उनके मरनेपर है। यह तो परम अद्भुत, परम विलक्षण—जिसकी एक यमदूत उनको मारते हुए ले जाते हैं और वहाँ जलती हुई झाँकीके लिये बड़े-बड़े आत्मज्ञानी कैवल्य-प्राप्त लोहेकी स्त्रीमूर्तिसे पुरुषका और पुरुषमूर्तिसे स्त्रीका आलिंगन महापुरुषगण तरसते रहते हैं-दिव्य लीला है। इसका कराते हैं। इस नरकका नाम 'तप्तसूर्मि' है।' अनुकरण कोई भी मनुष्य कदापि नहीं कर सकता, चाहे इसके बाद जब स्थूलदेहमें जन्म होता है, तब उन्हें वह कितनी ही ऊँची स्थितिमें हो। इस लीलाका कई जन्मोंतक नाना प्रकारके भयानक रोगोंसे पीड़ित अनुकरण करने जाकर जो पर-स्त्री और पर-पुरुष रहना पड़ता है। परस्पर प्रेमका सम्बन्ध जोड़ना चाहते हैं, वे तो घोर अतएव इस मायिक जगत्में श्रीकृष्णकी और नरक-यन्त्रणाकी तैयारी करते हैं। सचमुच उनमें सच्चा गोपियोंकी दिव्य लीलाका अनुकरण कदापि नहीं हो प्रेम है ही नहीं। वे तो तुच्छ कामके गुलाम हैं और प्रेमके सकता, न ऐसा दुस्साहस किसीको कभी करना ही नामको कलंकित करते हैं। सच्चा प्रेम तो एक श्रीभगवान्से चाहिये। ही होता है। प्रेममें प्रेमके सिवा और कोई कामना-वासना हाँ, जिनके अन्त:करण परम विशुद्ध हो गये हैं, इस रहती ही नहीं। जगत्में परोपकारतकके कार्योंमें आत्मतृप्तिकी लोक और परलोकके भोगोंकी सारी वासना जिनके मनसे एक वासना रहती है। जगत्का कोई भी जीव आत्मेन्द्रिय-मिट चुकी है, जो मुक्तिका भी तिरस्कार कर सकते हैं, तृप्तिकी इच्छाके बिना-चाहे वह अत्यन्त ही क्षीण ऐसे पुरुषोंमें यदि किन्हीं महापुरुषकी कृपासे श्रीकृष्णसेवाकी हो-किसीसे प्रेम नहीं करता और जिसमें आत्मेन्द्रिय-लालसा जग उठे और भुक्ति-मुक्तिकी सूक्ष्म वासनातकका तृप्तिकी वासना है, वह प्रेम प्रेम नहीं है। आत्मेन्द्रिय-सर्वथा अभाव होकर उन्हें शुद्ध प्रेमा-भक्ति प्राप्त हो, तब तृप्तिकी इच्छासे रहित एकनिष्ठ प्रेम तो आत्माओंके सम्भव है गोपियोंकी भाँति श्रीकृष्ण उन्हें उपपतिके रूपमें प्राप्त हो सकें। अतएव यदि गोपियोंको आदर्श मानकर आत्मा, हमारे आत्माके भी आत्मा श्रीकृष्णके प्रति ही उनका अनुकरण करना हो तो वह परम पुरुष श्रीकृष्णके हो सकता है। जो पर-स्त्री और पर-पुरुष इन्द्रियतृप्तिकी इच्छासे—चाहे वह बहुत सुक्ष्म वासनाके रूपमें ही हो— लिये करना चाहिये, न कि हाड-मांसके घृणित पुतले प्रेमका स्वाँग सजते हैं, वे वस्तुत: अपना महान् अनिष्ट पर-पुरुष या पर-स्त्रीके लिये। करते हैं। वासनाको बढ़कर प्रबल रूप धारण करते देर शरीरसे तो अनुकरण कोई भी नहीं कर सकते। नहीं लगती। आगमें ईंधन डालनेसे जैसे आग बढती है, परंतु भावसे भी, जिनमें तिनक भी निजेन्द्रिय-तृप्तिकी वैसे ही भोग्य वस्तुकी प्राप्तिसे भोगतृष्णा बढ़ती है और वासना है, जो पवित्र और परम वैराग्यकी स्वच्छ उसके परिणाममें इस लोक और परलोकमें प्राप्त होते भूमिकापर नहीं पहुँच गये हैं, वे पुरुष या स्त्री यदि हैं—निन्दा, भय, क्लेश, कष्ट और अनन्त नरक-श्रीगोपी-गोपीनाथकी लीलाओंका अनुकरण करना चाहेंगे तो उनकी वही दशा होगी, जो सुन्दर फूलोंके हारके यन्त्रणा! शास्त्र कहते हैं-भरोसे अत्यन्त विषधर नागको गलेमें पहननेवालोंकी होती है। पांचभौतिक देहधारी स्त्री-पुरुषको तो श्रीकृष्णकी यस्त्विह वा अगम्यां स्त्रियं पुरुषः अगम्यं वा पुरुषं योषिदभिगच्छति तावमुत्र कशया ताडयन्तस्तिग्मया सूर्म्या लीलाकी तुलना अपने कार्योंसे करनी ही नहीं चाहिये।

गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

एक भाई गोपी-प्रेमकी बात पूछ रहा था। इसलिये भगवान् श्रीकृष्ण और किशोरीजीकी प्रेमलीलासे

कहना है कि जबतक प्राणीका शरीर और संसारसे यह बात स्पष्ट समझमें आ जाती है। उनकी लीला अपने

भक्तोंको प्रेमका तत्त्व समझाने और रस प्रदान करनेके सम्बन्ध नहीं छूटता, जबतक वह शरीरको मैं और

संसारको अपना मानता है, तबतक गोपी-प्रेमकी बात लिये ही हुआ करती है। एक समय श्यामसुन्दरके मनमें

समझमें नहीं आती। प्रेमीमें चाह नहीं रहती इसलिये प्रेमी

लीला करनेका संकल्प हुआ, तो आपने एक देवांगनाका

अपने लिये कुछ नहीं करता, जो कुछ करता है वह

अपने प्रियतमको रस देनेके लिये ही करता है। यहाँ

तर्कशील मनुष्य यह प्रश्न कर सकता है कि भगवान तो

सब प्रकारसे पूर्ण और रसमय आनन्दस्वरूप हैं। उनमें

किसी प्रकारका अभाव ही नहीं है। उनको रस देनेकी

बात कैसी ? उसको समझना चाहिये कि यही तो प्रेमकी

महिमा है, जो आप्तकाममें भी कामना उत्पन्न कर देता है, सर्वथा पूर्णमें भी अभावका अनुभव करा देता है।

प्रेमियोंका भगवान् सर्वथा निर्विशेष नहीं होता। उनका

भगवान् तो अनन्त दिव्य गुणोंसे सम्पन्न होता है और उनका अपना प्रियतम होता है। उनकी दृष्टिमें भगवान्के

ऐश्वर्यका भी महत्त्व नहीं है। उनका भगवान् तो

एकमात्र प्रेममय और प्रेमका ग्राहक है। प्रेमी भगवानुको रस देनेके लिये ही अपना जीवन

सुन्दर बनाते हैं, जैसे सुन्दर पुष्पको खिला हुआ देखकर

वाटिकाका स्वामी उस फूलसे प्रेम करता है, उसको

हाथमें लेता है, स्पूँघता है, उसकी शोभाको देखकर

प्रसन्न होता है; वैसे ही भगवान् भी अपने प्रेमीको

चाहरहित सुन्दर जीवन्मुक्त देखकर प्रसन्न होते हैं,

उनको उससे रस मिलता है।

पुष्प तो जड होता है, इस कारण स्वयं मालीसे प्रेम

नहीं करता। जैसे धनसे मनुष्य प्रेम करता है, परंतु धन

जड होनेके कारण मनुष्यसे प्रेम नहीं करता। जीव जड नहीं है, चेतन है; इसलिये यह भी अपने प्रियतमसे प्रेम

करता है अर्थात् भक्त भगवान्से प्रेम करता है और

और भक्त भगवान्का प्रियतम हो जाता है।

भगवान् भक्तसे प्रेम करते हैं। भगवान् भक्तके प्रियतम

भगवान् भक्तसे प्रेम करते हैं।

किशोरीजीको प्रेमरस प्रदान करनेके लिये उनकी परीक्षाकी

रूप धारण किया और किशोरीजीके पास गये। बातचीतके प्रसंगमें श्यामस्न्दरने कहा—'किशोरीजी! आप श्याम-सुन्दरसे इतना प्रेम क्यों करती हैं ? वे तो आपसे प्रेम नहीं

करते।' तब किशोरीजीने कहा—'तुम इस बातको क्या

समझो! प्रेम करना तो श्यामसुन्दर ही जानते हैं। वे ही प्रेम करते हैं। मुझमें प्रेम कहाँ है?' देवांगना बोली—

'नहीं-नहीं, वे तो प्रेम नहीं करते, तुम्हीं प्रेम करती हो।' तब किशोरीजीने कहा—'देवी! प्रेम करना जैसा श्यामसुन्दर जानते हैं, वे जितना और जैसा प्रेम करते हैं, वैसा कोई

नहीं कर सकता।' तब देवांगना बोली—'मैं तो यह नहीं मान सकती।' किशोरीजीने कहा—'तुमको कैसे विश्वास

हो?' देवांगना बोली—'यदि वे आपके बुलानेसे आ जायँ तो मैं समझूँ कि सचमुच वे भी आपसे प्रेम करते

हैं।' किशोरीजीने कहा—'यह तो तब हो सकता है जबिक कुछ समयतक तुम मेरी सखी बनकर यहाँ रहो।' देवांगनाने किशोरीजीकी बात स्वीकार की और उनकी

सखी बनकर रहने लगी। तब किशोरीजीने भावमें प्रविष्ट होकर भगवान्से कहा—'प्यारे! तुम कहाँ हो?' इतना

कहते ही देवांगनासे भगवान् श्यामसुन्दर हो गये। उनको देखकर किशोरीजीने कहा—'ललिते! वह देवांगना कहाँ

है ? उसे बुलाकर प्यारेका दर्शन कराओ।' तब ललिता बोली—'प्यारी! उसीमेंसे यह देव प्रकट हुए हैं, वह अब कहाँ है।' ललिता विवेक-शक्तिका अवतार है, यह भक्त

और भगवानुको मिलाती रहती है। इस लीलासे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भक्त भगवान्से प्रेम करता है और

रहस्यमयी वार्तामें श्रीराधामाधव संख्या २] रहस्यमयी वार्तामें श्रीराधामाधव (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) प्रश्न-भगवान् श्रीकृष्ण मोर-मुकुट धारण क्यों 'देख्यों दुर्यौ वह कुंज-कुटीरमें बैठ्यो पलोटत राधिका-पायन।' करते हैं ? उत्तर—मोर श्रीजीको बहुत प्रिय था और उनका प्रश्न—रासलीला क्या है? उत्तर—रास है—रसका समूह, रसबाहुल्य अर्थात् केलीम्ग (खेलनेका पश्) था। श्रीजीके प्रेमके कारण भगवानुने मोरपंख धारण किया। प्रतिक्षण वर्धमान रस। सांसारिक सुखका तो ह्रास होता प्रश्न—भगवान्ने गोपियोंसे कहा कि मैं तुम्हारा है और अपना पतन तथा भोग्य वस्तुका नाश होता है, ऋण जन्मभर उतार नहीं सकता, तो भगवान्पर गोपियोंका पर प्रेममें ऐसा नहीं है। प्रेममें ह्रास अथवा नाश नहीं क्या ऋण था? होता, प्रत्युत वृद्धि होती है। उस वृद्धिका नाम 'रास' उत्तर—गोपियोंने अपने-आपको भगवान्को समर्पित है। प्यास बुझती नहीं, पेट भरता नहीं, जल घटता नहीं। कर दिया था। भगवानुकी तो कई गोपियाँ थीं, पर प्रश्न—रासलीलाकी रात्रिको 'ब्रह्मरात्रि' क्यों कहा गोपियोंके एक भगवान् ही थे। है?—'ब्रह्मरात्र उपावृत्ते०' (श्रीमद्भा० १०। ३३। प्रश्न—भगवान् प्रेमके लिये स्त्री (राधा) और 39) स्वामीजी—परमात्मस्वरूप होनेसे ही उसको पुरुष (कृष्ण)-रूपसे क्यों हुए? 'ब्रह्मरात्रि' कहा है। वैष्णवलोग भगवान्के सम्बन्धको उत्तर—संसारमें स्त्री और पुरुषके बीच विशेष आकर्षण होता है, इसलिये संसारी लोगोंको समझानेके 'ब्रह्मसम्बन्ध' और भगवानुके उत्सवको 'ब्रह्मोत्सव' लिये भगवान्ने स्त्री-पुरुषरूप धारण किया। जैसे प्रेममें कहते हैं। 'परकीया' की बात परकीयाका भाव लेनेके लिये कही रामजीके जन्मके समय छ: महीनेका दिन रहा था: गयी है, ऐसे ही स्त्री-पुरुषका रूप भी स्त्री-पुरुषका क्योंकि सूर्य कहीं रुक गया। ऐसे ही रासलीलाके समय भाव लेनेके लिये धारण किया गया है। छ: महीनेकी रात रही थी। प्रश्न-मृक्त होनेके बाद जो प्रेम होता है, उसमें प्रश्न—गीताप्रेससे प्रकाशित एक स्तोत्र है— प्रेमी तथा प्रेमास्पद दोनों बराबर होते हैं; अत: वहाँ 'भगवान् श्रीकृष्णकी कृपा तथा दिव्यप्रेमकी प्राप्तिके लिये।' आपसे सुना है कि प्रेमकी प्राप्ति भगवान्में माधुर्यभाव होता है। फिर वहाँ दास्य, सख्य, वात्सल्य आदि भाव कैसे होंगे? अपनापन होनेसे होती है, किसी साधन, तपस्या आदिसे उत्तर—माधुर्यभावमें सभी भाव आ जाते हैं; नहीं, फिर उपर्युक्त स्तोत्रका पाठ करनेसे प्रेमकी प्राप्ति जैसे—स्त्रीमें सभी भाव होते हैं, पत्नी माताका कार्य भी कैसे? करती है और दासीका काम भी। उत्तर—जिस संकल्पसे स्तोत्र लिखा गया है, उसीके अनुसार प्रभाव होता है। जिस उद्देश्यसे कार्य सख्य आदि सभी भाव प्रतिक्षण वर्धमान प्रेममें ही होते हैं। मुक्तिसे पहले भी ये भाव हो सकते हैं, पर वे किया जाता है, उसीकी सिद्धि होती है। जैसे-मन्त्र पढ़नेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है; क्योंकि जहर दूसरी सत्ताको लेकर होते हैं। मुक्तिके बाद एक सत्ता रहती है। दोनों ही प्रेमी और दोनों ही प्रेमास्पद होते हैं। उतारनेके उद्देश्य (संकल्प)-से ही उस मन्त्रकी रचना सभी भाव दोनों तरफ होते हैं। अत: कभी कृष्ण राधा की गयी। ऐसे ही यह स्तोत्र प्रेम-प्राप्तिके उद्देश्यसे बन जाते हैं, कभी राधा कृष्ण बन जाती हैं। कभी राधा बनाया गया है। अतः स्तोत्रका पाठ करनेसे भगवान्में सेवक बन जाती हैं, कभी कृष्ण सेवक बन जाते हैं— अपनापन होकर प्रेम हो सकता है।

भाग ९३ प्रश्न—प्रतिक्षण वर्धमान प्रेम क्या है? उत्तर—गोपियाँ पतिके सिवाय दूसरेको चाहती उत्तर-राधा और कृष्ण कभी एक हो जाते हैं हैं—ऐसा स्थूलदृष्टिसे देखनेपर उनको 'व्यभिचारदुष्टाः' अर्थात् राधा कृष्ण और कृष्ण राधा बन जाते हैं, कहा है। वास्तवमें वे व्यभिचारदुष्टा हैं नहीं; क्योंकि वे भगवान्को चाहती हैं, और भगवान् सबके परमपित हैं। तब वियोग होता है—'स्याम स्याम रटत राधा स्याम ही भई री, पूछत सखियन सों प्यारी कहाँ गई उनके सामने भगवान् होनेसे काम होते हुए भी काम नहीं री।' परंतु जब राधाजीको भान होता है कि 'मैं रहा, अपनी सुखबुद्धि नहीं रही! वृत्तिके भगवान्की राधा हूँ, वे कृष्ण हैं', तब मिलन होता है। इस तरफ जाते ही काम-वृत्ति नहीं रहती! इसलिये अच्छे-प्रकार प्रेममें वियोग तथा मिलन—दोनों होनेसे प्रेम अच्छे महात्मा भी गोपियोंका आदर करते हैं—'यथा प्रतिक्षण वर्धमान होता है। व्रजगोपिकानाम्' (नारदभक्ति० २१)! प्रेममें एकसे दो और दोसे एक होता रहेगा, तभी भगवान्में काम नहीं है, अगर हो तो फिर कामको वह प्रतिक्षण वर्धमान होगा। जब प्रेमी अपनी तरफ कौन जीत सकेगा? अत: भगवद्विषय होनेसे, भगवानुके देखता है, तब 'भगवान् मेरे हैं, मैं भगवान्का हूँ' और प्रति होनेसे व्यभिचार भी शुद्ध, भगवत्स्वरूप हो जाता जब भगवान्की तरफ देखता है, तब 'एक भगवान्के है और संसार लुप्त हो जाता है-सिवाय कुछ नहीं है,—'वासुदेव: सर्वम्।' इससे प्रेम कामाद् द्वेषाद् भयात् स्नेहाद् यथा भक्त्येश्वरे मनः। प्रतिक्षण वर्धमान होता है। यदि एकमें ही स्थिर रहे तो आवेश्य तदघं हित्वा बहवस्तद्गतिं गताः॥ 'ज्ञानयोग' हो जायगा। (श्रीमद्भा० ७। १। २९) प्रेममें मिलना और अलग होना भगवानुकी इच्छासे 'एक नहीं, अनेक मनुष्य कामसे, द्वेषसे, भयसे होता है, भक्तकी इच्छासे नहीं। इसमें ज्ञानाद्वेत अथवा और स्नेहसे अपने मनको भगवान्में लगाकर तथा अपने सारे पाप धोकर वैसे ही भगवानुको प्राप्त हुए हैं, जैसे स्वरूपाद्वैत नहीं होता, प्रत्युत प्रेमाद्वैत होता है। प्रश्न—गोपियोंमें कामनायुक्त भक्ति थी, फिर उन्हें भक्त भक्तिसे।' सर्वश्रेष्ठ क्यों कहा गया? अग्निमें पड़कर सब वस्तुएँ अग्निरूप ही हो जाती उत्तर—गोपियोंमें भगवान्पर निर्भरता विशेष थी। हैं। अत: किसी भी भावसे भगवानुमें वृत्ति लगायी जाय, वह वृत्ति शुद्ध हो जायगी। अत: गोपियोंका भगवान्में उन्होंने भगवान्के प्रेमके आगे कुछ भी स्वीकार नहीं किया—'या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा' जारभाव था, पर 'उनके सिवाय दूसरा कोई नहीं है'— (श्रीमद्भा० १०। ४७। ६१)। इसमें वह जारभाव समाप्त हो गया! प्रश्न-गोपियोंकी तरह 'दियत दृश्यताम्' प्रश्न—लौकिक और दिव्य वृन्दावनमें क्या अन्तर है? (श्रीमद्भागवत १०।३१।१) 'हे प्यारे! दीख जाओ'— उत्तर—लौकिक वृन्दावन इस लोकमें हमारे प्रत्यक्ष यह लगन हर समय नहीं रहती! है, पर दिव्य वृन्दावन अप्रत्यक्ष है। इस लौकिक उत्तर—कोई बात नहीं! घबराओ मत! गरमीके वृन्दावनमें दिव्य वृन्दावनके दर्शन हो सकते हैं। जैसे-मौसममें कभी गरमी कम पड़ती है, कभी अधिक, उससे सब कुछ भगवान् हैं, पर दीखते कहाँ हैं? संसार ही दीखता है। सुर्य एक जगह भी है और किरणरूपसे सब क्या घबराना! जगह भी है। ऐसे ही दिव्य वृन्दावन एक जगह भी है प्रश्न—भागवतमें गोपियोंको 'वनचरीर्व्यभिचार-दुष्टाः' कहा है (श्रीमद्भा० १०। ४७। ५१)। इसका और सर्वत्र भी। भक्तोंके हृदयमें भी दिव्य वृन्दावन प्रकट तात्पर्य क्या है ? Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha संख्या २] शृद्धि और श्रंगार शुद्धि और शृंगार (साधुवेषमें एक पथिक) ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसे अपने-आपको शुद्ध विनाशी देह आदि पदार्थोंका जो संगाभिमान मिल गया रखना और अपना शृंगार करना प्रिय न हो। अपने मैले है, उसे छोड़कर अविनाशी परमानन्द परमात्मासे अपने-कपड़े और अपना मैला शरीर सब शुद्ध करते हैं और आपको अभिन्न देखना-परम तत्त्वके साथ एकताका उन्हीं उजले शुद्ध वस्त्रोंसे शुद्ध देहको सजाते हैं। इतना अभिमान दृढ़ करना अहंकी शुद्धि है। भेद अवश्य रहता है कि कुछ लोग अपने-आपको ही जिस प्रकार सौन्दर्यप्रेमी सज्जन शरीरको शुद्धकर सन्तुष्ट और तृप्त करनेके लिये अपना शरीर शुद्ध रखते उसका वस्त्राभूषणसे शृंगार करते हैं, उसी प्रकार अन्तरंग हुए उसका शृंगार करते हैं और कुछ लोग अपने जीवनको भी सद्गुणों, सद्भावों और सत्-ज्ञान तथा स्नेहपात्रको सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रखनेके लिये ही शुद्धिके सदात्माभिमानसे सजाया जाता है। बाह्य शरीरकी शुद्धि साथ शृंगारका सदुपयोग समझते हैं। तथा शृंगार-सौन्दर्यपर स्थूल दृष्टिवाले रीझते हैं-महत्त्व शुद्धिका अर्थ है—अशुद्ध वस्तुओंका त्याग करना, देते हैं और अन्त:करणकी शुद्धि तथा शृंगार—सुन्दरतासे जो शुद्ध रूपके साथ मिल जाती हैं। विशेषरूपमें शरीरके प्रेममय भगवान् रीझ जाते हैं। बाह्य सौन्दर्यसे संसारी प्रत्येक अंगको जल-मृत्तिकाद्वारा साफ रखना तो शुद्धि व्यक्तियोंको रिझाकर परतन्त्र-भोगी बनना पड़ता है; है ही, पर इसके साथ-साथ पंच ज्ञानेन्द्रियोंकी, मन और अन्त:करणकी शुद्धि तथा सद्गुण और सत्-ज्ञानके सौन्दर्यसे बुद्धि तथा अहंकी शुद्धि भी अमित आवश्यक है। नेत्रोंसे भगवानुको रिझानेपर नित्य, स्वतन्त्र और परमानन्द सत्यका सदा पवित्र, सुन्दर और सत्त्वगुणी रूपोंको देखना, योग मिलता है। सांसारिक वस्तुओंको लेकर अभिमान, कानोंसे भगवत्कथा-प्रसंग और सन्तों तथा गुरुजनोंसे मोह, ममता, लोभ, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि दोष-दुर्विकारोंका ज्ञान-भक्तिकी कल्याणकारी चर्चा सुनना, रसनासे त्याग ही अन्त:करण—अन्तर्जीवनकी शुद्धि है और इसी भगवान्की चरित्र-कथा तथा उनके परम पावन नामोंका प्रकार अपने अन्त:करण—अन्तर्जीवनमें श्रद्धा, विवेक, कीर्तन करना, त्वचासे सदा सद्भाववर्धक पवित्र स्पर्शकी संतोष, उदारता, विनम्रता, क्षमा, सिहष्णुता, अटूट प्रसन्नता ही अभिलाषा करना—इन्द्रियोंकी शुद्धि है। मनसे विरक्त, आदि धारण करना ही सुन्दर शृंगार है। ज्ञानी, महात्मा और परमाधार परमात्माको ही अपना प्राय: देहको साफ कर लेना तो पश्-पक्षी भी मानकर उन्हींका मनन करना मनकी शुद्धि है। इसी जानते हैं। देहका सुन्दर शृंगार तो वेश्याएँ भी कर लेती प्रकार चित्तसे भगवान्के गुण, ज्ञान और चरित्रका हैं और दर्पणमें मुख देखकर सुन्दरताका गर्व करती हैं। चिन्तन करना चित्तकी शुद्धि है। बुद्धिसे जगत्-प्रपंचकी अपने अन्तरंग जीवन—ज्ञानेन्द्रियों, मन, चित्त, बुद्धि और अहंकारकी शुद्धि तथा शृंगार विरली सच्ची प्रेमिका ही असारता-असत्यताका अनुभव करते हुए महापुरुषके ज्ञानस्वरूपको जानना और भगवान्—परमानन्द परमात्माका कर पाती है या भोगोंसे विरक्त भगवान्का विवेकी भक्त ज्ञान प्राप्त करना बुद्धिकी शुद्धि है। अहंताके साथ ही करता है। अशुभेषु समाविष्टं शुभेष्वेवावतारयेत्। प्रयत्नाच्चित्तमित्येष सर्वशास्त्रार्थसंग्रहः॥ यच्छ्रेयो यदतुच्छं च यदपायविवर्जितम्। तत्तदाचर यत्नेन पुत्रेति गुरवः स्थिताः॥ 'अशुभ कर्मोंमें लगे हुए मनको वहाँसे हटाकर प्रयत्नपूर्वक शुभ कर्मोंमें लगाना चाहिये। यह सब शास्त्रोंके सारका संग्रह है। जो वस्तु कल्याणकारी है, तुच्छ नहीं है तथा जिसका कभी नाश नहीं होता, उसीका यत्नपूर्वक आचरण करना चाहिये। हे वत्स! गुरुजन यही उपदेश देते हैं।' (योगवासिष्ठ, मुमुक्षु० ७। १२-१३)

सिच्चदानन्दमयी योगशक्ति — श्रीराधा

(डॉ० श्रीकृष्णवल्लभजी दवे)

श्रीराधाजीका जन्म बरसानेमें हुआ था। उनके सहज ही थिरकने लगना, आँखिमचौली करना—सिखयाँ

पिता वृषभानु और माता कीर्ति थीं। बचपनसे ही उनके इन सबमें उनके साथ थीं।

चेहरेपर असाधारण ओजस्विताकी दमक अहर्निश छायी नेहकी डोर दृढसे दृढ़तर हुई। पावन प्रणय मग्न

रहती थी-अतिविचित्र जो थीं वे, मानो सिच्चदानन्दमयी हुआ, सखाधर्म सुदृढ़ हुआ। सहज भाव प्रबल हुआ।

ऐसेमें फिर श्रीकृष्ण, श्रीवेणुका तो कहना ही क्या? योगशक्तिका साक्षात् अवतार।

कहा जाता है कि जब वे मात्र छ: वर्षकी थीं, राधा अब करें तो क्या करें? देवकी दिव्यतासे कैसे

तभी उनकी माँका देहान्त हो गया था। फलत:

उनके पिता ने उन्हें नानीके घर भेज दिया और स्वयं

बरसाना छोड़कर अपनी दूसरी पत्नी कपिलाके साथ

रहने वृन्दावन चले गये किंतु कुछ ही वर्षों बाद जब

उनकी नानीमाँका भी देहांत हो गया तो पिताने उन्हें

अपने पास वृन्दावन बुलवा लिया। इन परिस्थितियोंमें

वृन्दावन जाते समय गोकुलके गोपीनाथ महादेव मन्दिरके

मार्गपर उनकी श्रीकृष्णचन्द्रसे भेंट हुई। तब वे बारह

वर्षकी थीं और श्रीकृष्ण सात वर्षके। अपनी इसी

प्रथम भेंटमें वृन्दावनका 'कन्हैया' राधाजीके लिये

मात्र 'कान्हा' होकर रह गया था।

श्रीकृष्ण जब पाँच वर्षके थे तभी गोकुल से

वृन्दावन आ गये थे। वृन्दावनमें उनके पराक्रमोंकी

अत्यधिक ख्याति रही। उनकी बाललीलाके प्रसंगने तो

सर्वत्र अपना अनूठा रंग जमा लिया। जैसे मात्र छ: वर्षकी आयुमें गोपांगनाओंके चीरहरणकी लीला, सात

वर्षकी आयुमें देवराज इन्द्रके गर्वहरणकी गोवर्धनलीला

एवं वेणुलीला आदि।

यों श्रीकृष्णके वृन्दावन आनेपर राधाजीका मन श्रीकृष्णसंगके कारण आनन्दमग्न हो चुका था। ललिता,

आदि अनेक सिखयोंका संग भी उन्हें प्राप्त था। फिर क्या था? आनन-फाननमें लीलाओंका दौर चल पडा—जैसे

श्रीकृष्णका सिखयोंके संग खूब हिल-मिलकर खेलना,

मिल-जुलकर झूले झूलना, पुष्पमालाओंसे सजना, संग-

संग विचरण करना। ऐसेमें राधाजीकी छविका तो कहना

ही क्या? एकदम निराली अनुपम अपूर्व; यथा श्रीकृष्णके कंधोंपर हाथ रखकर हौले-हौले चलते समय कदमोंका

विलग रहें! अन्तत: उन्हें दिव्य महारासमें सम्मिलित

होना ही पड़ा। श्रीकृष्णकी वेणुके संग नृत्य, ताल एवं लयमें लीन होकर, उल्लासमें सराबोर होकर,

कृष्णमय होकर, परिपूर्ण होकर। भवसागर जहाँ भावसागर बन जाता है और फिर महाभावसागरका

रूप ले लेता है, वैसे ही राधाके लिये कृष्णसुख ही

स्वसुख हो गया। राधाकी सारी चेष्टाएँ श्रीकृष्णको

समर्पित हो गयीं। इधर श्रीकृष्णकी चेष्टाएँ भी राधाजीको

कहा गया है।

समर्पित हो गयीं।

राधा माधवके संग उन्हींमें समायी रहतीं। एक दुजेके लिये एक दुजेके संग। राधा-माधवकी यह

छवि देशके जन-जनके हृदय-पटलमें चिरकालसे अंकित है। राधाजी श्रीकृष्णकी परम आराधिकाके रूपमें अभिमण्डित होती रही हैं। श्रीकृष्ण ही उनके परम

आराध्य है। वे कृष्णकी साक्षात् आत्मा हैं, अभिन्नरूपा हैं, दिव्य आनन्दमयी शक्ति हैं, मूलप्रकृति हैं, परमप्रिया हैं-फिर उस वियोगिनीकी गाथा जो स्वयंकी निजताको

दावपर लगाकर, क्षण-क्षण नि:शेष होकर, पल-पल मिटकर-तपकर सच्चिदानन्दमय योगशक्तिका रूप धारण

किये सनातन-कालसे श्रीकृष्णकी चिरसंगिनीके रूपमें, अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं। यही स्वरूप उनकी

अनन्तताका एहसास कराता है। यही अवधारणा उनके सामर्थ्यको उजागर कर देती है। यही कारण है कि

यहाँ श्रीराधाको सच्चिदानन्दमयी योगशक्तिका अवतार

िभाग ९३

बन्दौं

एक तत्त्व दोउ तन धरे नितरस पारावार॥

श्रीराधामाधव चरण

संख्या २] दारुब्रह्म (भगवान् जगन्नाथ)-का प्राकट्य-रहस्य दारुब्रह्म (भगवान् जगन्नाथ)-का प्राकट्य-रहस्य [एक मधुर प्रसंग] एक समय श्रीधाम द्वारकामें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र श्रीकृष्णचन्द्र प्रात:कृत्य समापन करके राजसभाको पधारे रात्रिकालमें श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा प्रभृति प्रधान अष्ट-और यथासमय पुनः अन्तःपुरमें पधारकर स्नानादि राजमहिषियोंके मध्य शयन कर रहे थे। स्वप्नावस्थामें करके समाधानपूर्वक भोजन करने बैठे। राजभोग सम्मुख आप अकस्मात् 'हा राधे! हा राधे!' उच्चारण करते आकर उपस्थित हुए, उद्धवादि सखा-वृन्दसहित प्रभुने हुए क्रन्दन करने लगे। जब अन्य किसी प्रकार प्रभुका भोजन किया और आचमन करके किंचित् विश्रामपूर्वक क्रन्दन नहीं रुका, तब बाध्य होकर महारानी श्रीरुक्मिणीदेवीने पुन: राजसभाको गमन किया। इस अवसरको पाकर अपने प्राणवल्लभको चरणसंवाहनपूर्वक जाग्रत् किया। महारानियोंने श्रीरोहिणीदेवीको पूर्वरात्रिकी घटना सुनाकर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र निद्राभंग होनेपर किंचित् लिज्जित उनसे व्रज-वृत्तान्त पूछा। माताजी कहने लगीं, 'प्यारी पुत्रियो! यद्यपि मैं व्रजलीलाकी अधिकांश घटनाएँ हुए और उन्होंने अति चतुराईसे अपना भाव गोपन कर लिया और पुन: निद्रित हो गये; परंतु इसका रहस्य जानती हूँ, तथापि माता होकर पुत्रकी गुप्त लीलाओंका जाननेके लिये महारानियोंके हृदयमें अत्यन्त व्यग्रता रहस्य किस प्रकार कह सकती हूँ? यदि राम-कृष्ण यह उत्पन्न हुई। सब परस्पर कहने लगीं 'देखो, हम सब कथा सुन लें तो फिर लज्जाकी सीमा न रहेगी।' इसपर मिलकर सोलह सहस्र एक सौ आठ महिषियाँ हैं और महिषीगण कहने लगीं, 'माताजी! जिस किसी प्रकार कुल, शील, रूप एवं गुणमें कोई भी अन्य किसी भी हो सके, हमें व्रजलीलाकी कथा तो आपको अवश्य रमणीसे न्यून नहीं है; तथापि हमारे प्राणवल्लभ किसी ही सुनानी होगी।' माताजीने कहा—'तब एक उपाय अन्य रमणीके लिये इतने व्याकुल हैं, यह तो बडे ही करो—सुभद्राको द्वारपर पहरेके लिये बैठा दो, किसीको विस्मयकी बात है! रात्रिमें स्वप्नावस्थामें भी जिस अंदर न आने दे; फिर मैं निस्संकोच तुम्हारे निकट रमणीके लिये प्रभु इतने व्याकुल होते हैं, वह रमणी भी व्रजलीलाका वर्णन करूँगी।' माताजीने यह कहकर सुभद्राकी ओर देखा और कहा, 'सुभद्रे! यदि राम-न जाने कितनी रूप-गुणवती होगी!' इसपर श्रीरुक्मिणीदेवी कहने लगीं, 'हमने सुना है कि वृन्दावनमें कृष्ण आयें तो उन्हें भी कदापि भीतर मत आने देना।' राधानाम्नी एक गोपकुमारी है, उसके प्रति हमारे प्राणेश्वर माताजीका आदेश पालन किया गया। सुभद्रा 'जो अत्यन्त आकृष्ट हैं; इसीलिये रूप-लावण्य-वैदग्ध्य-आज्ञा' कहकर द्वार-रक्षा करने लगीं। महिषीवृन्द पुंज नयनाभिराम श्रीप्राणनाथ हम सबके द्वारा परिसेवित माताजीको चारों ओरसे घेरकर बैठ गर्यी और माताजीने होकर भी उस सर्विचत्ताकर्षक-चित्ताकर्षिणीके अलौकिक सुमधुर व्रजलीला वर्णन करना आरम्भ किया। गुणग्राम भूल नहीं सके हैं।' श्रीसत्यभामादेवी कहने इधर राजसभामें राम-कृष्ण दोनों भाई चंचल हो लगीं, 'सब ठीक ही है, तो भी वह एक गोपकन्याके उठे। जब किसी प्रकार भी राजसभामें नहीं ठहर सके, सिवा तो कुछ नहीं; फिर उसके प्रति हमारे प्राणकान्त तब उत्कण्ठितचित्त होकर अन्त:पुरकी ओर चल पडे। इतने आसक्त क्यों हैं? अस्तु, जो कुछ भी क्यों न हो, आकर देखते हैं कि सुभद्रादेवी द्वारपर खडी हैं। उन्होंने हमारी सम्मतिमें तो इस सम्बन्धमें रोहिणीमाताको पूछनेपर सुभद्रादेवीसे पूछा, 'तुम आज यहाँ क्यों खड़ी हो? द्वार ही इसका ठीक-ठीक पता लग सकेगा; क्योंकि उन्होंने छोड दो; हमलोग भीतर जायँ।' श्रीमती सुभद्रादेवीने कहा, स्वयं वृन्दावनमें वास किया है और उस समयकी 'रोहिणी मॉॅंने इस समय तुम्हारा अन्त:पुरमें प्रवेश करना सम्पूर्ण घटनाओंको वे भलीभाँति जानती हैं।' यह निषेध कर रखा है, अत: तुमलोग अभी भीतर नहीं जा प्रस्ताव सबको रुचा। रात्रि बीती, प्रात:काल हुआ। सकोगे।' यह सुनकर जब दोनों भाई आश्चर्यान्वित होकर

भाग ९३ ****************************** इस निषेधका कारण ढूँढने लगे, तब माताजीकी वह देवर्षि भी वहीं चुपचाप खड़े रह गये। कुछ ही क्षण पश्चात् जब माताजीने पुनर्वार किसी एक रसान्तरका रहस्यपूर्ण व्रजलीलात्मक वार्ता उन्हें सुनायी दी। यह वार्ता श्रीवृन्दावनचन्द्रकी परम कल्याणमय, परमपावन, अद्भृत, प्रसंग उठाया, तब उन सबको पूर्ववत् स्वास्थ्यलाभ मंगलमय रासविहारात्मक थी। सुनते-सुनते दोनों भाइयोंके हुआ। सिद्धान्ततः रसान्तरद्वारा रसापत्तिका विदूरित होना मंगल श्रीअंगमें अद्भुत प्रेम-विकारके लक्षण दिखायी देने संगत ही है। इसी अवसरपर महाभावविस्मित देवर्षि लगे। क्रमशः दोनों ही प्रेमानन्दमें विह्वल हो गये। नारदजीने बहुविध स्तव-स्तुति करना आरम्भ कर दिया। करुणावरुणालय श्रीभगवान् कृष्णचन्द्रने देवर्षिद्वारा स्तुत अविश्रान्त प्रेमाश्रुकी मन्दािकनीधारा प्रवाहित होकर दोनोंके गण्डस्थल एवं वक्षःस्थलको प्लावित करने लगी। होकर प्रसन्नतापूर्वक कहा—'देवर्षे! आज बडे ही यह देखकर श्रीमती सुभद्रादेवी भी एक अनिर्वचनीय आनन्दका अवसर है। कहिये, मैं आपका क्या प्रीति-महाभावावस्थाको प्राप्त हो गयीं। जिस समय माताजी सम्पादन करूँ?' देवर्षिने कर जोड प्रार्थना की—'प्रभो! स्वामिनी श्रीवृन्दावनेश्वरीकी अद्भुत प्रेमवैचित्त्यावस्थाका वर्तमानमें यहाँपर उपस्थित होकर आप सबका जो एक अदृष्टाश्रुतपूर्व महाभावावेश परिलक्षित हुआ है, वर्णन करने लगीं, उस समय श्रीबलरामजी किसी प्रकार भी धैर्य धारण न कर सके। उनके धैर्यका बाँध टूट गया, स्वरूपत: वह क्या पदार्थ है और किस प्रकार उस श्रीअंगमें इस प्रकार महाभावका प्रकाश हुआ कि उनके महावस्थाका प्राकट्य हुआ? कृपया सविशेष श्रीहस्तपद संकुचित होने लगे और जब माताजी निभृत उल्लेख करके दासको कृतार्थ कीजिये। सर्वप्रथम तो निगृढ विलास-वर्णन करने लगीं तब तो श्रीकृष्णचन्द्रकी सेवामें यही एकान्त निवेदन है।' भी यही अवस्था हुई। दोनों भाइयोंकी यह अद्भुत भक्तवत्सल श्रीभगवान् अमन्दहास्यचन्द्रिकापरि-अवस्था देखकर श्रीमती सुभद्रादेवीकी भी यही अवस्था शोभित सुन्दर श्रीवदन-चन्द्रमासे देवर्षि नारदजीके सर्वात्माको हुई। तीनों ही मंगलस्वरूप महाभावस्वरूपिणी स्वामिनी आप्यायित करते हुए इस प्रकार वचनामृतवर्षण करने लगे—'देवर्षे! प्रातः तथा मध्याह्नकृत्य-समापनपूर्वक श्रीवृन्दावनेश्वरीके अपार महाभावसिन्धुमें निमज्जित होकर ऐसी स्वसंवेद्यावस्थाको प्राप्त हो गये कि वे लोगोंके जिस समय हम दोनों भाई राजसभामें समासीन थे, उसी देखनेमें निश्चल स्थावर प्रतिमूर्तिस्वरूप परिलक्षित होने समय महिषीगणके द्वारा पूछे जानेपर माता रोहिणीदेवीने महाचित्ताकर्षिणी अपार माधुर्यमयी व्रजलीलाकथाकी लगे। निश्चल, निर्वाक्, स्पन्दरहित महाभावावस्था! अतिशय मनोऽभिनिवेशपूर्वक दर्शन करनेपर भी अवतारणा की। महामाधुर्यशिखरिणी व्रजलीलावार्ताका श्रीहस्तपदावयव किंचित् भी परिलक्षित नहीं होते थे। ऐसा प्रभाव है कि हम जहाँ और जिस अवस्थामें भी हों, हमें वहींसे और उसी अवस्थामें आकर्षण करके वह आयुधराज श्रीसुदर्शनने भी विगलित होकर लम्बिताकार कथास्थलपर खींच लाता है। हम दोनों भाई उसी तरह धारण कर लिया। इसी समय स्वच्छन्दगति देवर्षि नारदजी आकर्षित होकर यहाँ उपस्थित हुए और देखा कि सुभद्रा भगवद्दर्शनके अभिप्रायसे श्रीधाम द्वारकामें आ उपस्थित द्वारपालिकारूपमें द्वारपर खड़ी हैं। उत्कण्ठावश हुए। उन्होंने राजसभामें जाकर सुना कि राम-कृष्ण अन्त:प्रवेशकाम हम दोनों श्रीसुभद्राद्वारा रोके जानेपर दोनों भाई अन्त:पुर पधारे हैं। देवर्षिकी सर्वत्र अबाध प्रवेशनिषेधका कारण ढुँढते रहे, उसी समय श्रीमाताजीके गति तो है ही; अन्त:पुरके द्वारपर जाकर उन्हें जो मुखारविन्दविगलित अत्यद्भुत व्रजलीलामाधुरीने कर्णगत होकर हमारे हृदय विगलित कर दिये। तत्पश्चात् जो अद्भुत दर्शन हुए, उससे देवर्षि स्तम्भित हो गये। इस प्रकारका दर्शन उन्होंने पूर्वमें कभी नहीं किया अवस्था हुई, उसका तो आपने प्रत्यक्ष दर्शन किया ही है। था। निज प्राणनाथकी ऐसी अद्भुत अवस्थाके कारणका मेरी प्राणेश्वरी महाभावरूपिणी श्रीराधाके महाभावकर्तक विचीरित्रभंत्रम्हि। क्रेम्मविक्शे ब्रिस्टा भाषिक्षं / व्रिद्धः व्यक्षिमे वस्मानुनं निर्मात्रे मुस्त श्रीमिक्षे महिन् श्रीमिक्षे महिन् श्रीमिक्षे महिन् श्रीमिक्षे महिन् श्रीमिक्षं प्रवासिक्षं प्रवासिक्यं प्रवासिक्षं प्रवासिक्यं प्रवासिक्षं प्रवासिक्यं प्रवासिक्षं प्रवास

राधाजीद्वारा माधवके अपूर्ण चित्रांकनका रहस्य संख्या २] नहीं जान सके।' इतना कहकर भगवान्ने जब देवर्षिसे दारुब्रह्मस्वरूपमें अवतीर्ण होकर जनसाधारणको दर्शन

स्वीकृति दे चुका हूँ। अतएव इन तीनों उद्देश्योंकी पूर्तिके महाभावावेशमूर्तिका मैंने प्रत्यक्ष दर्शन किया है, वे ही लिये हम चारों इसी स्वरूपमें आगामी कलियुगमें लवण-भुवनमंगल चारों स्वरूप जनसाधारणके नयनगोचरीभूत समुद्रतटवर्ती नीलाचल-क्षेत्रमें अवतीर्ण होकर प्रकाशमान

होकर सर्वदा इस पृथिवीतलपर विराजमान रहें। माया-

संनिपातमें ग्रस्त जीवसमूह एवं प्रभु-दर्शनविरहकातर भक्तजनके लिये वह महासंजीवन-रसायन स्वरूपचतुष्टय सर्वोत्कर्षसहित जययुक्त हो।' करुणायतन भक्तवांछा-

पूर्णकारी श्रीभगवान्ने कहा—'देवर्षे! इस विषयमें मैं

पूर्वसे ही अपने दो और भक्तोंके प्रति भी आपके

पुनः वरग्रहणका अनुरोध किया, तब देवर्षि प्रार्थना करने

लगे—'भगवन्! में और किसी वरका प्रार्थी नहीं हूँ,

निजजनोंके सर्वाभीष्टप्रदाता चरणयुगलमें केवल यही

प्रार्थना है कि आप चारोंकी जिस अत्यद्भुत

प्रार्थनानुरूप ही वचनबद्ध हूँ—एक भक्तचूडामणि महाराज इन्द्रद्युम्न और द्वितीय परमभक्तिस्वरूपिणी श्रीविमलादेवी। निखिलप्राणि-कल्याणहित भक्तचूडामणि महाराज इन्द्र-द्युम्नकी घोरतर तपस्यासे प्रसन्न होकर मैं नीलाचल क्षेत्रमें

श्रीजगन्नाथजी (श्रीकृष्ण), श्रीबलभद्रजी (श्रीबलराम), श्रीसुभद्राजी एवं सुदर्शनरूपसे श्रीनीलाचल-क्षेत्रको विभूषित करके अद्यापि विराजमान हैं।[व्रजके एक महात्मा] राधाजीद्वारा माधवके अपूर्ण चित्रांकनका रहस्य नव-नीरद-शुचि-नील-श्याम तनु उज्ज्वल आभा आँकी।

श्रीमती मूरति अंकित करती।

मधुर तूलिका कोमल करमें लै नाना रँग भरती॥ विविध भाँति अति मधुर मनोहर रूप बनाती जाती।

तन्मय मन, दुग-दुष्टि-अचंचल, उमँग न हृदय समाती॥

भाल विशाल तिलक मृग-मदके, भ्रुकृटि मनोहर बाँकी॥ सरस नयन शोभाके आकर मोहन आँजे अंजन। अतिशय चपल चोर मन-धनके सुर-ऋषि-मुनि-मन रंजन॥ मुख, मुसकान, नासिका नीकी, कानन कुण्डल झलकैं। केश कृष्णघन घूँघरवारे, इत उत बिथुरीं अलकैं॥

देनेका वर प्रदान कर चुका हूँ तथा महाविद्या-स्वरूपिणी

श्रीविमलादेवीद्वारा अनुष्ठित महातपस्यासे प्रसन्न होकर

उनकी प्राणिमात्रको बिना विचार किये महाप्रसाद वितरण

करनेकी प्रतिज्ञाको उक्त स्वरूपसे ही पूर्ण करनेकी

रहेंगे।' सर्वजीव-कल्याणव्रत देवर्षि श्रीनारदजीने मनोवांछित

वर प्राप्तकर प्रभुचरणारविन्दमें भक्तिपूर्वक प्रणाम किया

और मधुर वीणासे करुणावारिधि श्रीप्रभुके अमृतमय

नाम-गुणोंकी माधुरीका गान करते-करते यदुच्छागमन किया।

श्रीराम-कृष्णने भी माताजीके कथंचित् संकोचकी आशंका

करके उस स्थानसे प्रस्थान किया। ये ही मूर्तिचतुष्टय

मणिमय मुकुट मयूर-पिच्छ-युत सुंदर सिर पै साजै। बनमाल विराजै रत्न-हार उर पीत वसन दमकत दामिनि-सो कटि किंकिणि अति सोहै। निरखि-निरखि जिन अंकित मूरति भामिनि निज मन मोहै॥

लई तुलिका खींचि अचानक भई सशंकित भारी। चरण उभय आँके नहिं पियके, गहरी बात विचारी॥ भाजि जायँ जीवनधन पाछें जो चरणनके पाये। तो फिर कहा बनैगो मेरो, यही सोच उर छाये॥

ठाढ़े निरखि रहे मनमोहन प्रीति-रीति अति पावन। प्रकट भये, बिहँसे, पुलिकत तनु भई, देखि मनभावन॥

[पद-रत्नाकर]

श्रद्धा-विश्वासपूर्वक काशीवासका फल [तुम अन्नपूर्णा माँ रमा हो और हम भूखों मरें ?] (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) कल सायंकालकी ही तो बात है। 'ताऊजी! मेरी नौकरी छूट गयी है। दो महीनेकी गाँधी-मैदानमें बैठा देख रहा था भगवान् अंशुमालीकी तनखाह मिली है, इससे आपको भी दो माहका खर्च ओर, जो द्रुतगतिसे अस्ताचलकी ओर जा रहे थे। भेज रहा हूँ। कौन जाने कितने दिन बेकार रहना पडे। अचानक एक वृद्ध बंगाली सज्जन आकर मेरी इसलिये जरा हाथ रोककर खर्च करियेगा। आपके बेंचपर बैठ गये। आशीर्वादसे मुझे शीघ्र ही नौकरी मिल जायगी, ऐसी सफेद दाढ़ी, सफेद कुर्ता-धोती, हाथमें बंगलाका आशा है।' एक दैनिक। वृद्ध दम्पतीको चिंता तो हुई, पर उन्होंने सब कुछ बाबा विश्वनाथ और अन्नपूर्णा माईपर छोड़ दिया। बात शुरू की उन्होंने। सामान्य परिचयकी चर्चा उठी तो काशीका नाम आते ही श्रद्धासे भट्टाचार्य महाशयका हृदय भर उठा। पहलेकी संचित निधि और अन्तमें मिले चालीस बोले—'काशी तो कैलाश है। परंतु अब कहाँ रह गयी रुपयोंसे वृद्ध दम्पतीने छ: मासतक काम चलाया। वह काशी? अब तो वह कलकत्ता-जैसी नगरी बनती अन्तमें एक दिन ऐसा आ ही गया, जब शकरकन्दका

पी लिया!

मैं क्या कहता! काशीमें भी आधुनिकताका रंग आ ही रहा है। 'बाबा विश्वनाथकी नगरीमें, माँ अन्नपूर्णीके दरबारमें कभी कोई भूखा नहीं रह सकता। इस बातकी लोगोंने

जा रही है! क्या खयाल है आपका?'

भेजने लगा।

रुपया बच जाता।

परीक्षा करके देखी है।' कहते-कहते वे सुना गये लगभग १९वीं शतीके मध्यकी एक घटना। बोले-मेरे ही पूर्वपुरुषोंके सम्बन्धी एक वृद्ध

दम्पतीने काशीवासका निर्णय किया। उनका एक भतीजा था, जो कलकत्तेमें नौकरी करता था। उसने उन्हें काशी पहुँचा दिया और उनके खर्चके लिये बीस रुपया मासिक

उस जमानेमें बीस रुपयेका मूल्य बहुत था। वृद्ध ब्राह्मण दम्पती स्वयं तो मजेमें अपनी गुजर करते ही, साधु-संन्यासियोंकी भी सेवा करते, फिर भी दस-पाँच

'अचानक भतीजेकी नौकरी छूट गयी। दो महीनेके

खर्चके लिये चालीस रुपये भेजते हुए उसने लिखा-

घर सीधा पहुँचा आते थे, जिनके प्रति सेठकी श्रद्धा होती थी। वृद्ध ब्राह्मण दम्पतीका तो निश्चय था कि वे विश्वनाथकी नगरीमें माँ अन्नपूर्णाके रहते किसीसे भिक्षा माँगकर पेट न भरेंगे। वे चुपचाप पड़े थे अपनी

एक टुकड़ा घरमें बच रहा। उसीको खाकर दोनोंने पानी

उन दिनों कुछ मारवाडी सज्जन सीधा बाँटा करते

थे। एक-एक सीधेमें आटा, दाल, चावल, घी आदि

पर्याप्त रहता। लगभग ३ रुपये का सामान, ऊपरसे २

रुपये दक्षिणा भी देते। सेठके कर्मचारी उन लोगोंके

दिन भर यों ही निकल गया।

कोठरीमें। दूसरे दिन वृद्ध दम्पतीकी कोठरीके बाहर एक अपरूप बालिका आ खडी हुई। सीधा बाँटनेवाले

सेठके कर्मचारी वहाँसे निकले तो उसने उन्हें पास

बुलाया। उनके पास आनेपर बोली—'देखो भाई! मेरी

संख्या २] श्रद्धा-विश्वासपूर्वव	त काशीवासका फल
************************************	**************************************
बूढ़ी माँ और बाबा कलसे भूखे पड़े हैं। तुम एक	रो-रोकर हमसे कह रही थी कि मेरे बूढ़े बाबा और माँ
सीधा हमें भी दे जाओ।'	भूखे हैं कलसे। उन्हें एक सीधा दे जाओ।'
कर्मचारी बोले—'सीधा हम उन्हीं लोगोंको बाँटते	× × ×
हैं, जिनको बाँटनेकी आज्ञा हमारा सेठ देता है। बिना	सेठके बहुत कहनेपर वृद्ध दम्पतीने बताया कि
आज्ञा हम सीधा नहीं बाँट सकते।'	बाबा विश्वनाथ और माँ अन्नपूर्णाको छोड़कर और कोई
वह बालिका आँखोंमें आँसू भरकर बोली—'तो	नहीं जानता कि हम दोनोंने कलसे कुछ नहीं खाया।
क्या होगा बाबा? मेरे बूढ़े माँ-बाबाके पास कुछ नहीं	हमने किसीसे कहा ही नहीं।
है। मर जायँगे वे बिना भोजनके ? अपने सेठसे कहो न	× × ×
जाकर कि मेरे माँ-बाबा भूखे पड़े हैं कलसे।'	माँ अन्नपूर्णा भला अपने भक्तोंको भूखा रहने दे
'अच्छा माँ! हम सेठसे जाकर जरूर कहेंगे।'	सकती हैं ? यह भला हो ही कैसे सकता है—
बालिकाकी बात टालनेकी क्षमता मानो उनमें थी	'तुम अन्नपूर्णा माँ रमा हो और हम भूखों मरें?'
ही नहीं।	× × ×
× × ×	
सेठसे उसके कर्मचारियोंने जाकर कहा—'सेठजी!	सीधा लेना ही पड़ा और तबसे नियमित रूपसे वहाँसे भी
रास्तेमें एक बालिका हमें मिली थी। बड़े सम्पन्न घरकी	सीधा आने लगा।
लड़की जान पड़ती थी। वह कह रही थी कि उसके	× × ×
बूढ़े माता-पिताने कलसे कुछ नहीं खाया है। उनके लिये	कुछ दिनोंके बाद भतीजेका पत्र आया जिसमें
एक सीधा माँगा है।'	लिखा था—'ताऊजी! आपलोगोंके आशीर्वादसे मुझे
× × ×	पहलेसे भी अच्छी नौकरी मिल गयी है। अब मैं आपको
सेठजीके मनमें आ गया—'चलो देखें।'	तीस रुपये मासिक भेजा करूँगा। खाना बनानेमें आपको
सीधा लेकर वे कर्मचारियोंके साथ वृद्ध ब्राह्मण	बड़ा कष्ट होता होगा। कोई दाई आदि रख लीजियेगा।'
दम्पतीके मकानपर पहुँचे। कुण्डी खटखटायी।	× × ×
वृद्ध दम्पतीने किसी तरह दरवाजा खोला। सेठने	वृद्ध दम्पतीको भतीजेका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई।
उनसे पूछा—'बाबा! आपकी बेटी कहाँ है?'	उन्होंने सेठकी कोठीपर जाकर उनसे भेंट की और उनसे
वे तो हैरान। बोले—'कहाँ? हमारे तो कोई बेटी	अनुरोध किया कि वे अब उनको मिलनेवाला सीधा
नहीं, एक भतीजा है जो कलकत्तेमें रहता है।'	किसी अन्य व्यक्तिको दे दिया करें; क्योंकि अब उनके
'अच्छा, यह तो बताइये, आपने कलसे कुछ खाया	भतीजेको काम मिल गया।
पिया है या नहीं?'	भतीजेका पत्र भी उन्होंने सेठको दिखाया। पर सेठ
'क्यों हमने तो किसीसे कुछ कहा नहीं!'	बोला—'यह नहीं हो सकता बाबा। आप नाराज न हों।
'आपकी बेटी कह रही थी कि मेरे माँ-बाबा	जैसा आपका वह भतीजा, वैसे ही मैं आपका बेटा।
कलसे भूखे हैं। भूखसे उनके प्राण जा रहे हैं!'	आपको तो यह सीधा लेना ही होगा!'
'सेठजी, और किसीने कहा होगा। आप मकान	वृद्ध दम्पती सेठके आग्रहको टाल नहीं सके।
भूल तो नहीं गये हैं?'	सेठके यहाँसे सीधा आता रहा। भतीजेके यहाँसे आनेवाले
सेठने कर्मचारियोंसे पूछा। वे बोले—'नहीं सेठजी!	पैसेसे वे साधु-संन्यासियों और दीनोंकी सेवा करने लगे।
यही मकान है। हमें खूब याद है। यहींपर वह लड़की	× × ×

२२ कल्ल	प्राण [भाग ९३
**************************************	******************************
श्रद्धा और विश्वासकी कैसी अद्भुत कहानी!	तो तू रोज सबेरे ही दूध ले आती है। अब तुझे रोज सबेरे
× × × × ×	ही नाव मिल जाती है?'
'यह सारा खेल श्रद्धा और विश्वासका ही तो है।'	ग्वालिन बोली—'अब मुझे नावकी कौन जरूरत है
कहते हुए भट्टाचार्य महाशयने एक और घटना सुनायी।	महाराज! आपने जो तरकीब बता दी है, उससे मेरी
घटना है उनकी माताकी मौसीके सम्बन्धमें।	नावकी उतराई भी बच जाती है।'
वैधव्यके दिन बिता रही थीं बेचारी। बाबा	पण्डितजी हैरान होकर बोले—'कौन–सी तरकीब
विश्वनाथजीके दर्शनोंकी, काशी पहुँचनेकी बड़ी लालसा	ग्वालिन?'
थी उनकी।	'वही राम-नामवाली तरकीब! मैं रामका नाम लेती
	हूँ और उधरसे इधर चली आती हूँ और इधरसे उधर
पहुँचना विषम समस्या थी।	चली जाती हूँ।'
उनकी एक ही रट थी—	'सच?'
'विश्वनाथ बाबा टाका दाओ, देखा दाओ!'	'और क्या झूठ कहती हूँ महाराज!'
(हे बाबा विश्वनाथ! पैसा दो, दर्शन दो!)	पण्डितजी आकाशसे गिरे। सहज ही विश्वास न
× × ×	हो सका उन्हें ग्वालिनकी बातपर। बोले—'मुझे
अचानक एक दिन उन्हें एक पत्र मिला जिसमें	दिखाओगी ?'
लिखा था कि रेलवे कम्पनी एक नयी लाइन खोल रही	'हाँ-हाँ, चलिये न?'
है। उसके लिये तुम्हारी ससुरालकी जमीन रेलवेने ले ली	दोनों चल दिये। ग्वालिन रामका नाम लेकर झम-
है। उसका मुआविजा कलकत्ता आकर ले जाओ।	झम करती हुई नदी पार करने लगी। पण्डितजी राम-
कलकत्ता जाते ही सात–आठ सौ रुपये मिल गये।	राम करके आगे बढ़े पर पानी ज्यों-ज्यों बढ़ने लगा त्यों-
फिर विश्वनाथ बाबाके दर्शन करनेके लिये काशी	त्यों वे अपनी धोती ऊपर सरकाने लगे! स्थिति डूबने-
जानेसे उन्हें कौन रोक सकता था?	जैसी होने लगी!
× × ×	ग्वालिनने पीछे मुड़कर देखा। बोली—'यह क्या
काश, यह श्रद्धा, यह विश्वास हममें होता! फिर तो	महाराज! आप रामका नाम भी लेते हैं और धोती भी
कुछ कहना ही नहीं था। पर हमारी तो वही दशा है जिसका	समेटते जाते हैं ?'
चित्रण रामकृष्ण परमहंसने एक दृष्टान्तमें किया है—	× × ×
एक ग्वालिन नदी-पारसे दूध लेकर आया करती	हम भी इसी तरह रामका नाम लेते हैं और धोती
थी। बरसातके दिनोंमें नाव देरमें मिलनेसे दूध पहुँचानेमें	भी समेटते जाते हैं। ग्वालिन-जैसा विश्वास हममें कहाँ
बड़ी देर होती। एक दिन एक पण्डितजी, जो उससे दूध	है ? उस वृद्ध दम्पतिको तरह हम माँ अन्नपूर्णापर
लेते थे, उससे बोले—'तू रोज बड़ी देर कर देती है। क्यों	अपनेको कहाँ छोड़ते हैं ? उस विधवा ब्राह्मणीकी भाँति
नहीं तू रामका नाम लेकर नदी पार कर लिया करती!	हम परम विश्वाससे कहाँ कहते हैं—'बाबा, टाका,
रामका नाम लेकर लोग भवसागर पार कर जाते हैं।	दाओ, देखा दाओ!' फिर यदि हम भवाटवीमें भटकते
तुझसे यह नदी भी पार नहीं की जाती!'	रहते हैं तो दोष किसका?
दूसरे दिनसे पण्डितजीको सबेरे ही दूध मिलने लगा।	बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रविंह न राम।
कई दिन बाद पण्डितजीने ग्वालिनसे पूछा—'अब Hinduism Discord Server https://dsc.gg/db	राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव कि लह बिश्राम॥

	ाका आदर्श २३
به ب	का आदर्श
	ाजरा जााजुरा न्तजी मिश्र)
अर्थशास्त्रकी ट्युटोरियल कक्षा। प्राचार्यमहोदयके	हैं। जीवित रहनेके लिये हमें वायु चाहिये, ताप चाहिये,
सामने टेबलपर अभ्यास-पुस्तिकाएँ पड़ी थीं। छोटे	वस्त्र चाहिये, अन्न और जल चाहिये। यों कहिये,
प्रश्नोंके लंबे-चौड़े उत्तर। विद्यार्थियोंकी आँखें प्राचार्य	संसारमें आते ही आवश्यकताओंने हमें आ घेरा। फिर
महोदयके चेहरेपर थीं और प्राचार्य महोदयकी आँखें	भी दो रास्ते हैं—अपव्यय और मितव्यय। इसीमें सारी
अभ्यासपुस्तिकाओंकी पंक्तियोंपर। उन्होंने पुस्तिकाओंको	अशान्ति और शान्ति बसती है।
देखनेके बाद लड़कोंकी ओर देखते हुए कहा, 'Be	लगाम ढीली की और घोड़ा लगा हवासे बातें
clear and concise' (अर्थात् आपके उत्तर स्पष्ट एवं	करने। रास कड़ी हुई और बेचारा घोड़ा रास्तेपर आने
संक्षिप्त होने चाहिये)।	लगा। पर एक ऐसा घोड़ा होता है, जो काफी ढीठ और
संध्याके समय एक दिन मन्त्रीमहोदय आये।	उद्दण्ड हो जाता है। वह अपने प्राणोंकी भी परवा नहीं
आनेका उद्देश्य 'राष्ट्रीय प्रतिरक्षा-कोष' से सम्बन्धित	करता। लगामसे उसके जबड़े छिल जाते हैं, फिर भी
था। उन्होंने भाषणके तारमें कह डाला,—'आज राष्ट्रके	वह रुकनेका नाम ही नहीं लेता जबतक कि सवार गिर
सामने जो खतरा है, उसे दूर करना हम सबोंका परम	नहीं पड़ता।
कर्तव्य है। आज आवश्यकता है कि हम स्वयं अपनी	* * *
कुछ आवश्यकताओंको भूल जायँ और राष्ट्रके हितमें	घरमें बच्चे नये खिलौनेके लिये मचलते हैं। औरतें
अपने तुच्छ हितोंकी बलि दे दें।' अपने लंबे और	नये गहनोंके लिये रूठती हैं। आवश्यकताओंकी गति
सारगर्भित भाषणमें मन्त्रीजीने योजना एवं राष्ट्रीय रक्षाके	अत्यन्त तीव्र है। हमें मोटर चाहिये, आलीशान मकान
लिये मितव्ययितापर जोर दिया।	चाहिये, बगीचा चाहिये, सेवकोंका एक दल चाहिये।
देशके बड़े-बड़े समाचारपत्रोंने मुख-पृष्ठोंपर	ये न भी मिलें, फिर भी दिवा-स्वप्न तो हम देखते ही
लिखा,'Wage war on wastes' (अर्थात् हम बर्बादियोंसे	हैं, इनके विषयमें।
लड़ें)।	इन सभी आवश्यकताओंके पीछे हमारी एक
श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने तो बहुत पहले	सच्ची आवश्यकता है कि इन बढ़ती आवश्यकताओंपर
ही आसक्ति और अनबुझी आवश्यकताओंके विषैलेपनपर	हमें नियन्त्रण कैसे करना चाहिये? आत्मसंयमद्वारा।
प्रकाश डालते हुए अर्जुनसे कहा था—	आत्मसंयम कहाँसे आये ? वस्तुओंकी निस्सारताका बोध
ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।	होनेपर।
सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते॥	* * *
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।	शहरमें अकेले आदमीके लिये दो कमरोंवाला एक
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥	फ्लैट क्या, एक कमरा भी काफी होता है। मेरे एक
(२।६२-६३)	मित्रने पटना (राजेन्द्रनगर)-में अकेले दो कमरोंवाला
आवश्यकताओंकी अनन्त, दूषित कुण्डलिनी और	फ्लैट लिया। वे एकमें सोते थे और दूसरेमें पढ़ते और
उनके भयावह परिणामोंकी ओर लोगोंके ध्यान सदासे	मित्रोंसे मिल-जुल लेते थे। उन्होंने अपने विषयमें एक
आकर्षित किये गये हैं। * * *	मनोरंजक कहानी हमें सुनायी। अपने कमरोंको धीरे-धीरे
	उन्होंने फर्नीचरसे सुसिष्जत करना प्रारम्भ किया। अपने
आप मानेंगे कि सभीकी कुछ आवश्यकताएँ होती	आरामके लिये एक आरामकुर्सी थी उनके यहाँ। अब

छोटे-छोटे टेबल अखबार रखनेके लिये और बरामदेकी सभ्यताके बढते रोगकी देन हैं। बाह्य आडम्बरकी शोभा बढानेके लिये आये। आलमारियाँ आ पहँचीं। उछल-कृद हैं। आदमी अपनी मुट्ठी देखकर खर्च नहीं करता, बल्कि अपनी इच्छा देखकर रोता है। आजका घर क्या? फर्नीचरकी एक दुकान-सी हो गयी। चलने फिरनेको भी काफी कम जगह बच रही। अन्तमें तथाकथित सभ्य मस्तिष्क दुखी है, रुग्ण है। उन्होंने सब फर्नीचर घर भिजवा दिया और काफी जगह हो गयी। विद्यार्थीने कम शब्दोंमें भाव स्पष्ट नहीं किया। हमारी भी व्यग्रता बढ़ती चलती है। हम हैं कि मन्त्री महोदयने लंबे भाषणके दौरानमें मितव्ययिताके आवश्यकताओंको पूरा करके दम मारनेको परेशान और गुणोंका बखान किया, पर वे सब जहाँ-के-तहाँ रह आवश्यकताएँ वे हैं कि एक गयी और दूसरी कई गये। अमल तो उसपर किसीने नहीं किया। साथियोंको साथ लिये आ खडी हुई। गजबकी व्यग्रता हम बकते जाते हैं. लिखते जाते हैं। एक ही है। वह बढती ही जाती है और हमारी मुट्ठी छोटी पड बातको दस तरहसे कहनेके आदी हैं। कठिनता और रही है। हम हार माननेको तैयार नहीं हैं। इतनी दूरीतक दुरूहताको हम शैलीका एक विशेष गुण मान बैठें हैं। हमारा अहंकार पहुँच गया है कि दूसरोंके आगे हार विचारोंमें मितव्ययिताकी आवश्यकता है। माननेको तैयार नहीं। आजका मानव व्यग्रतामें — खिंचाव जेट और राकेटके युगमें भी हम शिथिलताके आदी (tension)-में जी रहा है। उसे कभी शान्ति नहीं। हैं। यह हमारी मुर्खता है। अभी एक मुर्ख हमारी बगलमें युद्धकी आशंका है, दीवालियेपनका डर है, हारका भय आ बैठता है। अनाप-शनाप बकने लगता है और हम भी है। 'तेते पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर' को हमने अपना काम छोड उससे उलझ पडते हैं। काम गया ताखपर। उलट डाला है, जो वस्त्-स्थितिसे कभी भी मेल नहीं तो हमें समयकी मितव्ययिताकी भी आवश्यकता है। खाता। 'लंबे पाँव पसार दो, मत देखो तुम सौर।' अब तो आफत आ गयी है! जो जितना अधिक हम बुद्धिका प्रयोग करें; क्योंकि भगवान्ने बड़ा भोगैश्वर्योंके पीछे है, उसका जीवन-मान उतना ही सोच-समझकर हमें एक दिमाग दिया है। हित-अधिक बढा-चढा है। मनकी सारी शान्ति गवाँकर अनिहतकी पहचान सबोंको है। न्यूनतम व्ययपर अधिकतम

दो मित्रोंके सामने वे अकेले आरामकुर्सीपर बैठें तो

कैसे ? दो से तीन कुर्सियाँ बडी-बडी और चली आयीं।

धीरे-धीरे इनका ताँता बढ चला। पहले बेचारे एक ही

टेबलपर पढ़ भी लेते, दाढ़ी भी बना लेते और अखबार वगैरह भी रख छोडते। अब 'डाइनिंग टेबल' आया, दो

काठ-कबाड जुटाये चलो, इसीमें आज जीवनकी सार्थकता

कायरोंका आदर्श कहा जाता है। आजके मानवकी

'सादा जीवन और उच्च विचार' को आज

है।

भाग ९३

दुष्टिमें कबीर फीके पड गये, जिन्होंने कहा है—

साईं इतना दीजिये जामें कुट्म समाय।

मैं भी भूखा ना रहूँ साधु न भूखा जाय॥

लाभ सभी क्रियाओंका मौलिक सिद्धान्त रहा है। इसे एक बार भला आजमाकर तो देखिये कि आप इस

परीक्षामें कहाँतक सफल होते हैं और आपमें आत्मसंयमकी

कितनी मात्रा है।

भूल-सुधार—इसी अंकके पृष्ठ ४० के मध्यमें प्रकाशित सं० २०७५ के स्थानपर सं० २०७६ पढ़ें।

आजकी अधिकांश आवश्यकताएँ कृत्रिम हैं।

प्रयागका कुम्भ एवं अर्धकुम्भ संख्या २] प्रयागका कुम्भ एवं अर्धकुम्भ हिन्दू-समाजमें प्राचीन कालसे ही कुम्भ-पर्व मनानेकी हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक-इन चारों प्रथा चली आ रही है। अमृतप्राप्तिके निमित्त देवताओं स्थानोंमें ही क्रमशः बारह-बारह वर्षपर पूर्णकुम्भका और दानवोंने मिलकर समुद्रमंथन किया। समुद्रमंथनके मेला लगता है, जबिक हरिद्वार तथा प्रयागमें अर्धकुम्भ-पर्व भी मनाया जाता है, किंतु यह अर्धकुम्भ-पर्व उज्जैन फलस्वरूप चौदह अप्रतिम रत्नोंकी प्राप्ति हुई, जिनमें अमृतकुम्भ भी एक था, परंतु अमृतप्राप्तिके अनन्तर और नासिकमें नहीं होता। अर्धकुम्भ पर्वका माहात्म्य भी अमृतकुम्भके लिये दोनों पक्षोंमें भयंकर युद्ध होने लगा। कुम्भपर्वके समान ही माना जाता है। अमृतकुम्भको हस्तगत करनेके प्रयासमें उसकी बुँदें चार तीर्थराज प्रयागमें होनेवाले कुम्भपर्वविषयक कतिपय स्थानोंपर गिर पड़ीं; अत: उन्हीं चार स्थानोंपर कुम्भयोगमें शास्त्रीय वचनोंको यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है-कुम्भ-मेलेका आयोजन होता है। उपर्युक्त देवासुरसंग्राम मेषराशिं गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ। बारह दिनोंतक चला। देवताओंके बारह दिन मनुष्यके अमावास्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके॥ बारह वर्षोंके बराबर होते हैं। अत: बारह वर्षोंके (स्कन्दपुराण) अनन्तर ही कुम्भ-पर्वका आयोजन होता है। कुम्भ-'जिस समय बृहस्पित मेष राशिपर स्थित हों तथा योगमें स्नान करनेका अप्रतिम माहात्म्य शास्त्रोंमें बताया चन्द्रमा और सूर्य मकर राशिपर हों तो उस समय गया है-तीर्थराज प्रयागमें कुम्भ-योग होता है।' सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानशतानि च। वृत्रं स्वधितिर्वनेव जघान रुरोज पुरो अरदन्न सिन्धून्। वैशाखे नर्मदा कोटि: कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥ बिभेद गिरिं नवमिन्न कुम्भमा गा इन्द्रो अकृणुत स्वयुग्भिः॥ 'कार्तिक महीनेमें एक हजार बार [गंगामें] स्नान करनेसे, माघमें सौ बार [गंगामें] स्नान करनेसे और (ऋग्वेद १०।८९।७) 'कुम्भ-पर्वमें जानेवाला मनुष्य स्वयं दान-होमादि वैशाखमें करोड़ बार नर्मदामें स्नान करनेसे जो फल होता है, वह प्रयागमें कुम्भ-पर्वपर केवल एक ही बार स्नान सत्कर्मोंके फलस्वरूप अपने पापोंको वैसे ही नष्ट करता है करनेसे प्राप्त होता है।' जैसे कुठार वनको काट देता है। जिस प्रकार गंगा नदी अपने तटोंको काटती हुई प्रवाहित होती है, उसी प्रकार कुम्भ-पर्व अञ्चमेधसहस्त्राणि वाजपेयशतानि लक्षं प्रदक्षिणा भूमेः कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥ मनुष्यके पूर्वसंचित कर्मोंसे प्राप्त हुए शारीरिक पापोंको नष्ट करता है और नूतन (कच्चे) घड़ेकी तरह बादलको नष्ट-(विष्णुपुराण) भ्रष्टकर संसारमें सुवृष्टि प्रदान करता है।' 'हजार अश्वमेध-यज्ञ करनेसे, सौ वाजपेय-यज्ञ तान्येव यः पुमान् योगे सोऽमृतत्वाय कल्पते। करनेसे और लाख बार पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह फल केवल प्रयागके कुम्भस्नानसे देवा नमन्ति तत्रस्थान् यथा रंका धनाधिपान्॥ प्राप्त होता है। (स्कन्दप्राण) 'जो मनुष्य कुम्भ-योगमें स्नान करता है, वह प्रयागमें कुम्भके तीन स्नान होते हैं। यहाँ कुम्भका अमृतत्व (मुक्ति)-की प्राप्ति करता है। जिस प्रकार प्रथम स्नान मकरसंक्रान्ति (मेषराशिपर बृहस्पतिका संयोग दरिद्र मनुष्य सम्पत्तिशालीको नम्रतासे अभिवादन करता होने)-से प्रारम्भ होता है। द्वितीय स्नान (प्रधान) स्नान) है, उसी प्रकार कुम्भ-पर्वमें स्नान करनेवाले मनुष्यको माघ अमावस्या (मौनी अमावस्या)-को होता है। तृतीय देवगण नमस्कार करते हैं।' स्नान माघ शुक्ल पंचमी (वसन्तपंचमी)-को होता है।

विलक्षण प्रेम और विलक्षण कृपा [एक सुपात्र मुसलमान बालकका विलक्षण प्रेम और श्रीराधारानीकी विलक्षण कृपा]

(श्रीप्रमोदकुमारजी चट्टोपाध्याय) प्रेमयोगिनी मीरॉॅंने कितने दर्दभरे स्वरमें गाया था— मास था, प्रथम शीतका मधुर स्पर्श आरम्भ हो गया था।

'हे री मैं तो दरद दिवाणी, मेरो दरद न जाणै कोय।' वह तो श्रीकृष्णके प्रेममें पागल थी, विरह-

व्यथासे व्याकुल थी और उसके आत्मीय-स्वजन अपने

धर्ममें मस्त थे, वे उसके दर्दके मर्मको भला कैसे समझ सकते थे? उन्हें तो उसकी सारी हरकत ही उलटी

दीखती थी और वे उसके साथ, उसके 'उलटे जीवन'को सुधारनेके लिये उसपर जुल्म ढाते थे। इसीलिये न उसने

घबराकर भक्त तुलसीदाससे राय पूछी थी कि ऐसी दशामें उसे क्या करना चीहिये और उस सच्चे ज्ञानीने कितना नि:संकोच लिख भेजा था कि—'*जाके प्रिय न*

राम बैदेही। तजिये ताहि कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही॥' सनेही होनेसे क्या, यदि उसे भगवान्पर प्रेम नहीं, जो प्रेम-रससे अनभिज्ञ होकर प्रेमीपर अत्याचार करता है, उस एकको ही करोड़ वैरी मानकर त्याग देना

चाहिये। और उपाय भी क्या है? भला ऐसे प्रेमहीन सनेहियोंके स्थूल धर्मकी रक्षाके लिये कोई भगवद्भक्त अपने अमर धर्मका कैसे त्याग कर सकता है? वास्तवमें इस तरहके मीराँ-जैसे सच्चे भक्त दुर्लभ ही

होते हैं और ऐसे भक्तोंके पावन दर्शन, चरित्र-श्रवण सब देशों और सब कालोंमें मंगलकारी होते हैं। सौभाग्यसे मुझे एक बार ऐसे मुसलमान बालक भक्तके दर्शन अनायास

कुछ क्षणके लिये प्राप्त हुए थे और वे क्षण मेरे जीवनके अमूल्य क्षणोंमें हैं। उन्हीं पावन क्षणोंकी कुछ झाँकी मैं अपने पाठकोंको भी देना चाहता हूँ।

अपने जीवनके प्रारम्भिक कालमें अवश्य कुछ समझ हो जानेके बाद मैं एक तीव्र आवेग लेकर घरसे बाहर निकल पड़ा था। इच्छा थी कि सारे भारतमें घूम-

किसीकी कृपा प्राप्त हो सकी तो अपने जीवनको धन्य

घूमकर साधु-महात्माओंके दर्शन करूँगा और यदि

पथकी सारी धूल पावन यमुनाके जलमें धोकर मानो यात्राकी सारी थकानसे मुक्त हो गया-प्रसन्नचित्त होकर चुपचाप विश्रामघाटपर बैठ गया। वहीं सन्ध्याके समय भगवानुकी आरती देखी। यह आरती मैंने पहले

भी देखी थी, परंतु आज....—मानो उसमें कुछ नयापन था—सात्त्विक उपासनाके साथ मानो अपूर्व शिल्प-चात्रीका समावेश था। ऐसा मैंने भारतके और किसी

विश्राम करके वृन्दावन चलुँगा।

तीर्थमें नहीं देखा। बैठे-बैठे एक अपूर्व तन्मयताका अनुभव कर रहा था। भीड़ धीरे-धीरे कम होने लगी। कितने ही नर-नारी आये और चले गये। कुछ प्रौढ व्यक्ति घाटकी

प्रफुल्ल मन, स्वस्थ शरीर और हृदयमें उद्दाम आशा

लेकर उत्तरप्रदेशके तीर्थोंका भ्रमण कर रहा था। घूमते-

फिरते मथुरा आया और सोचा कि दो-एक दिन यहाँ

सीढ़ियोंपर बैठकर सन्ध्या-वन्दन करनेके बाद आचमन करके चले गये। कितने ही देशी-विदेशी आये और चले गये, कितनी ही मथुरावासिनी मधुरहासिनी रमणियाँ अपने आकर्षक स्वरका आनन्द बिखेरती हुई निकल

प्रतीत होता था। उसकी कच्ची-पक्की मुँछ-दाढ़ी वैसी ही छोटी-छोटी छँटी हुई थी जैसे प्राय: उत्तर भारतके

िभाग ९३

गयीं। अब मैं भी वहाँसे चलनेके लिये तैयार हुआ। घाटके पास ही रास्तेमें एक मुसलमान खड़ा था, एकदम साधारण नहीं, कुछ-कुछ भद्र और आधुनिक ही

मुसलमानोंकी देखी जाती है। धूपमें तपा हुआ उसका मुख लालिमासे उज्ज्वल था, छोटी-छोटी आँखोंकी

दृष्टि काफी पैनी थी। उसके हाव-भावसे ऐसा लगता था मानो कोई खोयी हुई चीज खोज रहा हो। देखा, मुझपर भी उसकी दृष्टि निबद्ध है। उससे आँख मिलते

संख्या २] विलक्षण प्रेमः	भौर विलक्षण कृपा २७
**************************************	**************************************
बढ़कर मैं उसके सामने खड़ा हो गया। प्रौढ़ वयस्	् खलबली मची, बोला—'यमुना-तीरपर ही क्यों न चलें,
होनेपर भी उसके चेहरेपर एक भव्यता विद्यमान थी।	वहीं कहीं बैठकर हम बातचीत कर लेंगे।' वह मेरे
वही तीक्ष्ण दृष्टि,—सिरसे पैरतक मेरी ओर निहारकर,	मनको बात समझ गया और तुरन्त राजी हो गया। हम
अपने मुँहपर हाथ रखकर वह कई बार खाँसा; फिर मेरी	ं फिर यमुना-तटपर आ गये और एक छत्तेदार चबूतरेपर
ओर देखते हुए ऐसे खड़ा हो गया मानो मुझे ही उससे	े बैठ गये। रेलका पुल निकट ही था, गाड़ी उसपरसे होती
बात करनी हो, गरज मेरी हो। मैंने भी बस आरम्भ कर	हुई चली गयी, वह व्यक्ति उसी ओर ताक रहा था। मेरा
दिया, हिन्दीमें उससे पूछा, 'लगता है आप यह	ं चित्त अब अस्थिर हो उठा। मैं बोला, 'अब कहें न, जो
किसीको खोज रहे हैं।' वह बोला—'जी हाँ' और	ं कुछ कहना हो।'
इतना कहकर वह चुप हो गया। कुछ देर मौन रहकर	'हाँ कहता हूँ साधूजी! मेरा एक लड़का है, वही
उसने मुझसे पूछा—'आप बंगाली हैं?' उसके मुँहरे	एकमात्र लड़का है मेरा। आज दस–बारह दिनसे लापता
'बंगाली' शब्द ऐसा कटु एवं विद्वेषपूर्ण प्रतीत हुआ कि	है।' यह सुनते ही मैं बोल उठा, 'पर मैं क्या कर सकता
सुनते ही मेरा अन्त:करण विषाक्त हो गया, बर्ड़	हूँ ?' वह व्यक्ति अब मानो कुछ कातर स्वरमें बोला,
बेचैनीका अनुभव हुआ, फिर भी मैंने धीरेसे उत्तर दे	'आप सब बात सुन लें, फिर उसके बाद जो इच्छा हो,
दिया—'जी हाँ।'	कहें।' और वह अपनी कहानी सुनाने लगा।
वह बोला—'शायद मथुरा-वृन्दावन तीरथ-जात्राके	'मेरे लड़केकी कहानी बड़ी ही अजीब है। उसका
लिये आये हैं ?' इसका भी उत्तर दे दिया। वह फिर	ः स्वभाव बड़ा विचित्र था। हमलोग मुसलमान हैं, आप
बोला—'कलकत्तेसे आये हैं ?' हामी भर ली। मन-ही-	नहीं जान सकते, हम बादशाहकी जात हैं—सुलतान
मन सन्देह हुआ, कहीं पुलिसका आदमी तो नहीं है ?	आलमके अमलसे ही दिल्लीमें हमारा बड़ा रोब-दाब
इससे पूर्व मुझे इस बातका काफी अनुभव हो चुका थ	रहा है, एक वक्त सारा हिन्दोस्तान ही हमारे हुक्मपर
कि बंग-सन्तानकी रिहाई विदेशमें भी नहीं होती—	चलता था। डाफराइन लाटसे हम जागीर लेकर आगरेमें
पुलिस पीछा करती ही रहती है।	बस गये—अखबारमें यह सब छपे हुए हरफोंमें दर्ज है।'
वह कुछ देर मौन रहकर एक बार चारों ओर ताक	मेरे लिये यह असह्य हो गया। इस सबसे छुटकारा
और फिर कुछ भाव-भंगी करता हुआ नरम स्वरमे	पानेकी आशासे मैं व्याकुल होकर प्रार्थनासूचक स्वरमें
बोला—'साधुजी! उस बड़े फाटकके पास ही मेर	बोला—'दुहाई शाहजादा साहब, अब अपने लड़केकी
गरीबखाना है, आपसे कुछ बात करनी है, मिहरबार्न	चात— ।'
करके एक बार वहाँ चलेंगे क्या?'	'हाँ, हाँ, वह कहता हूँ। लेकिन ठाकुरजी! हमारे
'गरीबखाना'—कितना विनयपूर्ण वचन है! सोचा,	खानदानका किस्सा जाने बिना आप यह कैसे समझ
शायद दौलतखाना ही हो। बड़ा फाटक नजदीक ही था,	सकेंगे कि कितने बड़े घरका लड़का होकर उसने कितनी
इसलिये थोड़े समयमें ही उसके दौलतखानेपर जाकर जे	ं बड़ी अहमकी की है ? इसीलिये पहले—।' मैंने हाथ
दृश्य देखा उससे और आगे पैर बढ़ानेका उत्साह न रहा	🛾 जोड़कर कहा, 'अब यदि असली बातपर आ जायँ… ।'
मनुष्यके चेहरे और वेशभूषाके साथ उसके निवासस्थानक	तब उसने फिर कहा—'हाँ, वही कहता हूँ…हमारा
सम्बन्ध कितना विपरीत हो सकता है, वह विषमत	ं जो मजहब है, एक दिन सारी दुनियाको उसे कबूल
कितनी गहरी हो सकती है यह स्वयं आँखोंसे देखे बिन	करना होगा, नहीं तो किसीका उद्धार नहीं हो सकता।
कोई विश्वास नहीं कर सकता, विश्वास करनेकी बात	हम वही मुसलमान हैं, हिन्दू हमारे लिये काफिर हैं। हर
ही नहीं। पर उस बातको जाने दें, अब मेरे मनमें कुछ	ं एक हिन्दू, वह चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो, हमारे

भाग ९३ लिये बस काफिर ही है। हमारे मुल्ला उनके सायेसे भी मुसलमान होगा। इस वक्त उसकी उम्र तकरीबन सोलह अलग रहते हैं। खुदाकी मिहरबानीवाले हमारे इस सालकी होगी। एक दिन उसने अपनी माँसे एक बेढब मजहबकी खासियत समझकर यदि कोई काफिर भी इस सवाल कर दिया। क्या कहा उसने, जानते हैं ?'—इतना मजहबको कबूल करे तो हम उसे अपने-जैसा ही बना कहकर आँखें फाड-फाडकर वह मेरे मुँहकी ओर ताकने लगा, जैसे यह देख रहा हो कि मैं भी अवाक् देंगे, लेकिन काफिरके साथ हमारा दोस्ताना नहीं चल सकता'''।' हो रहा हूँ या नहीं। मैंने कहा, 'मैं कैसे जान सकता असह्य हो गया! किस मुसीबतमें आ फँसा! पर हूँ ? मैं तो उस समय वहाँ उपस्थित नहीं था ?' उपाय भी क्या, सुनना ही पड़ेगा। वह तो अब अपने 'उसने क्या कहा, जानते हैं?' वह बोला— मजहबकी महिमा गानेमें डूब गया था और अब मुझे भी 'अम्मी! तुमलोग हिन्दुओंको काफिर क्यों कहती हो? उसके लड़केकी अद्भुत कथा सुननेका कोई कौतूहल बोलो, आज मुझे बताना ही होगा।' माँ तो हुई औरतकी जाति, वह कुछ भी बोल न सकी। उसने रातको मुझे नहीं था। कुछ देर बाद, जब और न सह सका, तो झट बोल उठा—'अच्छा, आप बैठिये, मैं तो अब घर बताया कि लड़केने यह बात पूछी थी। सुनते ही मेरे बदनमें आग लग गयी; सीधे उसका कान पकड़ बाहर चला।' और इतना कहकर एकाएक खड़ा होकर उसे सलाम ठोंक दिया। वह तो अवाक् हो मेरी ओर देखने खींच लाया और तड़ातड़ बेंत लगाते-लगाते बोला, 'जो लगा मानो मैंने कोई बड़ा विकट अभिनय कर डाला हो। हमारे पाक इस्लाम मजहबपर ईमान नहीं लाते, बुतोंको वह नरम स्वरमें बोला—'जरा बैठिये, अब महज पूजते हैं, उन्हें काफिर कहते हैं, यह कुरानमें लिखा है, तुम फिर कभी यह बात पूछोगे? हिन्दुओंका नाम लड़केकी ही बात कहुँगा।' लोगे ?' उसके मुँहसे एक लफ्ज न निकला; मेरी बातका बाध्य होकर फिर बैठ गया। उसने आरम्भ किया—'आप क्या जानें, हमारे पाक मजहबके साथ कोई जवाब ही उसने नहीं दिया। 'मेरी साँस फूल गयी।' हिन्दुओंके बुतपरस्त मजहबकी कोई बराबरी ही नहीं हो कहकर वह हाँफने लगा। फिर बोला, 'हमें खुदाताल्लाने सकती। हमारा ईमान कुरानशरीफमें ही है। उसमें लिखा पैदा किया है' हमारे लड़कोंके मुँहसे वैसी बातें क्यों? है कि हिन्दू कभी बहिश्तमें कदम नहीं रख सकते, उन्हें 'खैर उसे जाने दें। उस दिनसे लडकेने फिर कोई तो जहन्तुममें ही जाना पड़ेगा। इसीलिये हमारे खानदानमें बात नहीं पूछी। उसने एक संजीदा रवैया अख्तियार कर लड़कोंको शुरूसे ही ऐसी तालीम दी जाती है कि उसका लिया। किसीसे कुछ न बोलते हुए चुपचाप दिन गुजारने ईमान इस मजहबमें पक्का हो जाय।' देखा, भीतर एक लगा। मैंने सोचा; सख्त सलूक बरतनेसे उसे अक्ल आ प्रबल रोष उसे पीडित कर रहा है; पर बोले बिना भी गयी है।' शान्ति नहीं। मैंने व्यग्रभावसे कहा—'अब सुनाइये, 'कासिम नामका मेरा एक भतीजा है, उसीके साथ अपने लड़केकी बात।' पढ़ता था। कासिम अभीसे पाँच बार नमाज पढ़ता है, 'हाँ, वही कह रहा हूँ। मेरा लड़काः उसका नाम जो हम भी नहीं कर सकते। वह बहुत ऊँचे किस्मका है दादर रहमान, वह मकतबमें पढता था, दो-तीन मुसलमान है, पीछे वह एक नामजादा आदमी होगा, अंग्रेजीकी किताबें भी पढ़ा था; शान्त तबीयतका था। ऐसा हम सबको यकीन है। उस वाकयाके कुछ दिन उसे सब प्यार करते थे। वह थोड़ा शर्मीला था, अधिक बाद कासिमने एक दिन शामकी नमाजके बाद चोरी-बोलता-चालता नहीं था। फिर भी हम उसे बडे अदब-चोरी आकर मुझसे कहा, 'चचाजान! दादर तो एकदम कानुनके मुताबिक रखते थे-हमारे खानदानका तरीका काफिर हो गया है। हिन्दुओंके मन्दिरमें जो देवता हैं जो यही ठहरा। मुझे यकीन था कि वह एक दिन पक्का उनकी ओर देखा करता है, दरवाजेके पास खडा होकर

संख्या २] विलक्षण प्रेम ३	गौर विलक्षण कृपा २९
<u> </u>	***********************************
चुपचाप देखता रहता है, फिर मुँह-ही-मुँह बुदबुदाकर	हाफिजने ध्यानसे सब कहानी सुनी और वह
न जाने क्या बोलता है, रोता भी है, उसकी आँखोंसे	बोले—' ज़रूर काफिर पण्डितोंके लड़के इसके पीछे लगे
पानी बहने लगता है। मैंने यह सब खुद देखा है।'	हैं, और यह सब काफिरी सीख है।' कासिम बोला,
मुसलमान-प्रवर जरा दम लेकर फिर बोलने लगे—	'पण्डितोंके लड़कोंके साथ तो उसे मैंने कभी नहीं देखा।
'कासिमके मुँहसे यह सुनकर मैं लड़केको लेकर दरगाह	इसके सिवा हम तो कभी उनके साथ नहीं मिलते–जुलते
शरीफ गया, जहाँ हमारे मुल्ला, हाफिज, हाकिम रहते	और न वे ही हमारे साथ मिलते-जुलते हैं।' यह सब
हैं। उन्होंने कासिमसे सब बातें कुरेद-कुरेदकर पूछीं।	सुनकर हाफिज मुल्ला फरूखसियारके साथ मशविरा
जो-जो उसने ठीक अपनी आँखोंसे देखा था, सब कुछ	करने गये। हम घर चले आये। आकर देखा, दादर घरमें
कासिमने बताया। उसने कहा, परसों जब हम एक साथ	गुमसुम बैठा था। उसका चेहरा देखकर ऐसा बिल्कुल
मकतबसे आ रहे थे तो उसने मुझसे कहा कि तुम घर	नहीं लगता था कि उसके मनमें कोई पाप या गुनाह है।
जाओ, मैं जरा ठहरकर आऊँगा। मैं जानता था कि	यह इतना शैतान है, अपना मतलब इस तरह छिपाकर
रास्तेमें जो काफिर हिन्दुओंका मन्दिर है, वहीं वह	रखता है! कौन उसका सलाहकार है, कौन काफिरका
जायेगा और इसीलिये मुझे भगाना चाहता है। मैंने कहा	बच्चा उसे यह सब सिखाता-पढ़ाता है, यह सब उसके
कि 'मैं तुझे वहाँ नहीं जाने दूँगा, वहाँ जानेसे तू काफिर	मुँहसे निकलवानेके लिये उस रात मैंने उसे इतना मारा
हो जायगा।' 'यह सुनकर वह बोला, 'भाई! तूने उस	कि वह बेहोश हो गया लेकिन फिर भी उसने कुछ भी
मन्दिरके देवता किशनजी और उनकी बीवीको देखा	नहीं बताया।
है ?' मैंने कहा, 'वह सब क्या हमारे देखनेकी चीज है	यहाँतक सुनते–सुनते मन ग्लानिसे भर गया। इनकी
रे ? हम तो ईमानदार पक्के मुसलमान हैं।' दादरने मेरी	अज्ञ बुद्धि कितनी नीचे जा सकती है, कैसे ये सत्य
बातपर जरा भी कान नहीं दिया और ही बहुत-सी बातें	वस्तुको दबाकर मिथ्याकी इमारत खड़ी कर सकते हैं—
बोलने लगा। अन्तमें बोला, 'खुदाने ही तो सबको पैदा	यही सब सोचकर मनमें बड़ी उदासी, तिक्तता और
किया है, फिर उनकी दुनियामें हमें जो अच्छा लगेगा,	विरक्ति भर गयी। सोचा, बालकके दैवानुग्रहजनित प्रेम-
उसे हम क्यों नहीं देखेंगे? इसमें तो किसीका कोई	धर्मके विषयमें उसका पिता या समाज अनभिज्ञ है।
नुकसान नहीं। इसमें गुनाह क्या है, अगर मुझे अच्छा	सहज दृष्टिसे जो वस्तु देखी जा सकती है, उसे वे नहीं
लगता है तो देखनेमें कसूर क्या है?'	देखेंगे; देखेंगे उसे, जो वास्तवमें नहीं है; अपनी-अपनी
'उसकी यह बात सुनकर मुझे गुस्सा आ गया। मैंने	ईर्ष्या–द्वेषजनित कल्पनाकी आँखोंसे। मैं समझ गया कि
दादरसे कहा, 'तू तो जरूर काफिर हो गया है। हमारा	उन्हें यह सन्देह है कि किसी पण्डित या पण्डितोंके
अल्लाह तुझपर खफा होगा। तुझे काफिरोंके साथ	लड़कोंने उनके धर्म-प्रवण मुसलमान बालकको सरल
जहन्नुममें भेजेगा।' मेरी बातका उसपर कोई असर नहीं	पाकर बहकाने और हिन्दू बनानेकी चेष्टा की है। एक
हुआ। सिर्फ इतना बोला, 'खुदा तो सब कुछ देखता है;	बात कहे बिना न रह सका, यद्यपि जानता था कि वह
मैंने अगर कोई कसूर नहीं किया तो वह क्यों मेरे ऊपर	विफल ही होगी। पूछा—'मिर्जासाहब, आपकी आयु तो
खफा होगा?' हाँ, उसने इतना और कहा था कि 'क्या	पचासके ऊपर होगी।'
हमारे-जैसे छोटे कमजोर आदिमयोंकी तरह अल्लाहमें	'हाँ, इस रमजानमें पचपन हो गयी है।'
भी गुस्सा-गिला है ? मुहब्बत हुए बिना क्या अल्लाहके	'अच्छा, तो क्या आपने कभी ऐसा देखा है कि
पास जाया जा सकता है ? जहाँ मुहब्बत है, वहाँ गुस्सा	किसी हिन्दूने किसी मुसलमानको हिन्दू बनानेकी चेष्टा
कभी रह सकता है?'	की है?'

भाग ९३ ******************* वह सिर हिलाकर बोला, 'पहले तो कभी नहीं ××× वहीं सोया हुआ था। उसे आवाज देकर उठाया देखा था, लेकिन अब 'शुद्धि' जो शुरू हो गयी है।' और पूछा तो उसने कुछ सोचकर कहा कि मैं कुछ नहीं 'वह तो असली मुसलमानोंके लिये नहीं है, बल्कि जानता, न जाने कब उठकर चला गया। ऐसा तो वह जो पहले हिन्दु थे और किसी कारणसे जाति या रोज ही करता है। मैं ढूँढते-ढूँढते गया तो देखा कि एक समाजसे बाहर हो गये थे या मुसलमान हो गये थे, उनके कुएँकी मेडपर अँधेरेमें चुपचाप बैठा है। मैंने पकड़कर लिये है। उनमेंसे यदि कोई फिर अपने धर्ममें आना चाहे उसे बेदम मारना शुरू कर दिया। मारकी चोटसे भूततक तोः ।' भाग जाते हैं, यह हम सब खूब अच्छी तरह जानते हैं। 'सो तो ठीक है, बाहरसे ऐसी बातें बनाकर ही किंतु इतनी सख्त चोटोंके पडनेपर भी उसपर कुछ असर लोगोंको बतायी जाती हैं। अन्दर-अन्दर उनका क्या न हुआ, वह शैतान शैतान ही बना रहा। हैरानीकी बात मतलब है, यह कौन कह सकता है ? हाँ, तो भी सच्चे यह कि इतनी मार खाकर उसने चूँ तक न किया, मुसलमानको तो वे नहीं ही बदल सकेंगे, यह ठीक ही गुस्सेकी एक मामूली-सी बात भी उसके मुँहसे नहीं निकली। उसके बाद जब एक दिन मैं अपनी बीवीके है। अभी छोटे-छोटे लड़कोंके ऊपर, जिनका दिल हलका है, आजमाईश करके देख रहे हैं शायद…।' कहनेसे मौलालीसे एक ओझाको बुला लाया तो फिर इसके ऊपर कुछ कहनेकी गुंजायश तो नहीं थी, वह भाग गया। जानेसे पहले××× कह गया कि 'मेरी फिर भी मैंने कहा—'मिर्जासाहब! आपने क्या नहीं सुना उम्मीद छोड़ दो, लाड़ली मुझे बुलाती है, मैं एकदम है कि धर्मान्तर ग्रहण करनेमें हिन्दू विश्वास नहीं करते? काफिर हो गया हूँ।' हिन्दुओंकी तो धारणा ही यह है कि हिन्दू होकर जन्म 'उस दिनसे उसका कोई पता नहीं; मैंने लेकिन लिये बिना हिन्दू नहीं हुआ जा सकता।' उम्मीद बिल्कुल नहीं छोडी है। आज दो हफ्ते होनेको आये, रोज एक बार इन सब जगहोंपर घूम-घूमकर उसे मिर्जासाहब बोले—'हाँ, वह तो सुना है, लेकिनः।' यह 'लेकिन' ही तो सर्वनाशका कारण होता है। ढूँढ़ता हूँ। एक इतने बड़े घरका लड़का आखिरमें अब देखा कि वे कुछ आई हो गये हैं। करुण नेत्रोंसे काफिर हो जाय यह कैसे सहा जा सकता है?' ताकते हुए बोले, 'उसके बादकी बात भी जरा सुन मैंने पूछा—'तो आप मुझे क्या करनेको कहते लीजिये। जिस दिन वह लापता हुआ, उससे दो-एक दिन पहलेसे वह न जाने कैसा हो गया था। उसकी माँने मिर्जासाहब बोले—'मेरा वही एक लड़का है, मैं मुझसे कहा कि 'तुम लड़केकी तरफ देखते नहीं ? मुझे अब भी उसे लौटा लाना चाहता हूँ। आप जब घाटपर लगता है कि किसी देवताने उसे धर दबाया है, नहीं तो बैठे थे, तभीसे आपको देख रहा था। उसके बाद जब उसकी आँखें हर वक्त लाल क्यों रहती हैं ? ऐसा लगता आप उठकर आये तो ऐसा लगा मानो आपके जरिये है मानो उनमें पानी भरा हुआ है। किसीके साथ बात उसका पता लग सकता है।' करते समय उसकी आँखोंसे झर-झर पानी झरने लगता 'परंतु आपका लड़का तो अपनी इच्छासे काफिर है। कोई उसके पास जाय तो वह वहाँसे दूर सरक जाता हो ही गया है, इतनी यातना मिलनेपर भी जब वह बदल है, हमेशा अकेलेमें ही रहना चाहता है। यह सब नहीं सका तो उसका पता मिलनेपर भी क्या आप उसे देखकर मुझे तो डर लगता है।' उसकी मॉॅंकी यह बात घर ले जा सकेंगे?' सुनकर मैं उसी रात लालटेन लेकर उसके बिस्तरको उत्तरमें उसने कहा—'वह अभी नादान बच्चा है, देखने गया, देखा, वह वहाँ था ही नहीं। कहाँ बिना समझे-बूझे एक काम कर बैठा है। उसे उसकी गर्मांnxxvisrm्त्रिशंडह्वार्च्क्रिक्प्रक्तिम्सारहःसेव्ह्रदः व्यक्तिभवास्त्रतः । स्मिक्किन्तः, शहमार्गः व्यक्ति विद्वारा विद्वरा विद्वारा विद्वारा विद्वारा विद्वरा विद्वरा विद्वारा विद्वरा व

संख्या २] विलक्षण प्रेम औ	र विलक्षण कृपा ३१
*****************************	<u>********************************</u>
फकीर-औलिया हैं, उनके पास ले जाऊँगा, उनकी	मन-प्राण अधीर हो उठते हैं। लगता है मानो वे मेरे
शक्तिके असरसे उसका रवैया बदल जायगा, मुझे पक्का	जन्म-जन्मान्तरके अपने परिचित हों। इसी कारण इस
यकीन है।'	बार भी मैं अपनी जगहपर स्थिर न बैठ सका, उठ पड़ा
'अच्छा, यदि कभी कहीं उसका पता मिल गया	और निमिषमात्रमें उस स्थानपर जा पहुँचा। वहाँ देखी
तो मैं आपको खबर कर दूँगा।' उसने मुझे अपना पता	एक अद्भुत बालक-मूर्ति—स्वास्थ्यपूर्ण, सुडौल शरीर,
दे दिया। अगले दिन मैं मथुरासे चल पड़ा।	उज्ज्वल गौर वर्ण, कौपीनमात्र वस्त्र। लगा जैसे व्यासपुत्र
× × ×	परमहंस शुकदेवकी ही मूर्ति देख रहा होऊँ। वह रूप
वृन्दावन मेरा सुपरिचित और अति प्रिय स्थान है।	देखकर मैं निर्वाक्, अपलक हो गया। चित्रकारपर
अनेक बार वहाँ आ-जा चुका हूँ। राधाबागके ब्रह्मचारी-	रूपका प्रभाव बड़ा ही तीव्र होता है, यह सभी जानते
आश्रममें ही मैं बराबर ठहरा करता हूँ। वहाँ स्वामी	हैं। रूप बाह्य होनेपर भी अन्तरकी सम्पदाने उस रूपको
केशवानन्दके आश्रममें मैंने लम्बा समय बिताया है। वहाँ	ईश्वरीय लावण्यसे मण्डित कर रखा था; वह लावण्य
इस बार भी ठहरा। दूसरे दिन बादलोंसे भरी साँझके	और कुछ नहीं, ज्योतिका ही दूसरा नाम है। वास्तवमें
समय मैं घूमनेके लिये यमुनातटकी ओर गया। वहाँ	यह ज्योति ही चित्रकारके लिये काम्य है।
वनचारी साधुओंके आश्रम हैं। उनके आसपास ही घूम	उन दिनों कुछ ठंड थी, किंतु बालकके शरीरपर
रहा था। सामने यमुना फैली हुई थी, उसके उस पार	कोई वस्त्र नहीं था, शायद उसे इसकी आवश्यकता भी
बहुत दूरतक उसकी तटभूमि फैली थी, बीच-बीचमें दो-	नहीं थी; किंतु मेरी बुद्धि तो स्थूल देहगत बुद्धि ठहरी,
एक पेड़ थे, उसके पीछे सुदूर प्रान्ततक वृक्ष-श्रेणीकी	उसका शीतबोध अपने ऊपर आरोपितकर अपने शरीरका
गाढ़ नीलाभ रेखा दिग्दिगन्ततक व्याप्त हो आकाशके	गरम कपड़ा उसे ओढ़ा दिया। उसकी अपलक दृष्टि
साथ मिल गयी थी।	यमुनाकी ओर निबद्ध थी, मुँहमें कोई शब्द नहीं। सोचा,
जहाँ बैठा था, उससे कुछ दूरीपर तीन अपूर्व	वनचारी वैरागियोंका कोई बालक भक्त होगा। साधु-
विशाल वृक्ष खड़े थे। सुन्दर सुपरिष्कृत, तृणहीन भूमिपर	सम्प्रदायमें बालक ब्रह्मचारी बहुतेरे देखे हैं, पर ऐसी
लम्बे-लम्बे तीन वृक्षोंके मूल इस प्रकार समान अन्तरपर	आँखें बहुत कम देखनेमें आती हैं। पद्मपलाश नेत्रोंकी
विद्यमान थे कि उनके बीच एक सुन्दर त्रिकोण क्षेत्रकी	बात हम सबने सुनी होगी—वे नेत्र अरुणवर्ण थे, उनमें
सृष्टि हो गयी थी। प्रकृतिद्वारा रचित ऐसा क्षेत्र प्राय:	जल झलमल कर रहा था, मानो अभी-अभी झर पड़ेगा।
देखनेको नहीं मिलता, वह मानो किसी योगीका आसन	ऐसी किशोर साधुमूर्ति मैंने जीवनमें प्रथम बार ही देखी
हो। वह क्षेत्र उस समय खाली नहीं था। देखा, उसके	थी।
भीतर कौपीनधारी एक मूर्ति अद्भुत भंगिमाके साथ बैठी	मथुरासे आनेके बाद अबतक उस भद्र मुसलमानके
है। वह भंगिमा ऐसी चित्ताकर्षक थी कि मेरी दृष्टि	पुत्र दादर रहमानकी बात ही मेरे मनमें बार-बार आया
बलपूर्वक उसी ओर खिंची रह गयी। प्रथम दृष्टिमें ही	करती थी। उसके अन्तरमें प्रेम-धर्मकी स्फुरणाकी बात,
ऐसा लगा कि वह मूर्ति किसी वैष्णव एवं योगीकी है,	उसका बिना क्रोध किये इतना अत्याचार सहना, फिर
उसका बैठनेका ढंग योगी-जैसा ही था।	दृढ़-संकल्प बालकका गृहत्याग, जाने कहाँ अन्तर्धान
मेरी प्रकृति बचपनसे ही कुछ ऐसी बन गयी है कि	हो जाना आदि-आदि बातें बार-बार आकर मनमें
किसी साधुकी मूर्ति सामने आते ही उधर सहज ही	हलचल पैदा करती थीं। किंतु जैसे ही इस मूर्तिको
आकर्षित हो जाती है। विशेषकर शान्त-धीर प्रकृतिका	सम्मुख देखा, वे सब बातें काफूर हो गयीं, इसी मूर्तिपर
कोई साधु हो तब तो उससे परिचय प्राप्त करनेके लिये	चित्त तन्मय हो गया, प्रश्न करूँ या न करूँ यह

भाग ९३ ****************** पीकर वह किशोर फिर समाहित-चित्त होकर यमुनाके सोचनेकी भी प्रवृत्ति नहीं रही। बैठे-बैठे उसे ही देखनेमें मग्न हो गया। तटवर्ती वनकी ओर देखने लगा। अब मेरी ओर ताककर इसी समय एक व्रजवासिनी घाघरा, चोली, ओढनी वह व्रजबाला विनतीभरे करुण स्वरमें बोली—'बाबा! सब कुछ नीले रंगका धारण किये हुए आ उपस्थित हुई। यदि तुम कुछ देर यहीं रहो तो कोई हर्ज है?' उसके एक हाथमें एक थाल कपड़ेसे ढका था, निश्चय मेरे उत्तरसे वह प्रसन्न हुई, किंतु फिर उस ही उसमें कुछ खाद्य पदार्थ था; दूसरे हाथमें एक साफ बालककी ओर देखकर अश्रुपूर्ण नयनोंसे बोली—'कल झकझक करते हुए लोटेमें कुछ पेय था। अति कमनीय ही मुझे लाड्लीजीने कह दिया था कि उसका सब समय था उसका मुखमण्डल; अपूर्व भाव-भंगीके साथ खड़ी ध्यान चलता रहता है, होश नहीं रहता, उसे खिला दो, नहीं तो उसका शरीर नहीं टिकेगा। दस-बारह दिनसे होकर उसने धीरे-धीरे हाथकी चीजें उस किशोरके सामने रख दीं। वह बोली—'दुलाल मेरे, अब कुछ खा कुछ नहीं खाया, थोड़ा-सा दूध, बस। इससे क्या शरीर तो लो, मैं अभी तुम्हें खिलाकर घर जाऊँगी, फिर रह सकता है?' उसके बाद चिकत हरिणीकी तरह वहाँका काम समाप्त कर सन्ध्या-समय पुन: यहाँ घूमकर उसने किशोरको देखा, कहा—'क्या करूँ? आऊँगी और तुम्हें वहाँ ले चलूँगी।' अच्छा मेरे गोपाल! तुम यहीं रहो। मैं घर जाती हूँ। मुझे तो अभी घरका काम करना है। साँझको आकर तुम्हें यह सब मधुर व्रजभाषामें कहकर वह उसके मुखकी ओर स्नेहभरी आँखोंसे देखने लगी। मैं वहाँ एक ले जाऊँगी। अच्छा।' अपरिचित व्यक्ति भी उपस्थित हूँ—इस ओर उसका किशोर निर्वाक्, समाहितचित्त अपने आसनपर बिल्कुल ध्यान नहीं था; मानो उसके सामने उस बैठा रहा। व्रजवासिनीका अन्तर्धान भी कुछ विचित्र-सा किशोरके सिवा और कोई न हो। उसकी बातें इतनी ही लगा। जब मैं उस ध्यानमग्न योगी-मूर्तिकी ओर देख मधुर थीं कि भाषाके साथ कण्ठ-स्वर मिलकर एक रहा था, तब जरा मुड़कर उसे एक हाथमें लोटा और अपूर्व संगीतकी सृष्टि कर रहा था। दूसरे हाथमें थाल लेकर जाते हुए देखा था। उसके बाद साधुमें किंतु कोई भावान्तर नहीं हुआ; वह जैसे वह आगे बढ़ते-बढ़ते न जाने कहाँ विलीन हो गयी। अपलक यमुनाकी ओर ताक रहा था वैसे ही ताकता वहाँ कोई पेड अथवा और किसी प्रकारकी आड नहीं रहा। यह देख उस व्रजांगनाने व्याकुल-भावसे 'मेरे थी, यह मुझे पूर्ण स्मरण है। लाल' कहते हुए उसके चिबुकका स्पर्श किया। उस लड़की का आना-जाना और इस थोड़ेसे समयके समय वह ध्यानस्थ किशोर तनिक चौंका, किंतु उसके लिये रहना—इस सबके भीतर जो कुछ देखा, उससे नेत्र वैसे ही अपलक बने रहे। लगा कि वृन्दावनके यमुना-तटपर इस किशोर वैरागीको फिर एक बार उस नवागताके मुँहकी ओर देखकर केन्द्र करके एक महान् आनन्दमय अपार्थिव खेल चल वह बोला, 'चम्पा, मुझे ले चलो, ले चलो,' और ऐसा रहा है। खैर, हमारी समझ भी कितनी। भक्तिधर्म, प्रेमधर्म कहते-कहते उठने लगा। जननीकी तरह स्नेहसे हाथ आदिकी बातें साध्-महात्माओंके मुँहसे हम सुनते रहते पकडकर मधुर भाषामें वह व्रजनारी बोली, 'अभी नहीं हैं—कभी-कभी मनमें यह अभिमान भी होता है कि हम मेरे लाल! अभी कुछ खा लो, उसके बाद सन्ध्या-समय उसका तात्पर्य समझ गये, परंतु भगवान् ही जानते हैं कि आकर तुम्हें ले जाऊँगी।' इतना कहकर उसने थालमेंसे एक ग्रास उठाकर उसके मुँहमें डाल दिया। दो-एक उसे समझनेयोग्य यथार्थ बृद्धि हममें कितनी है! यह सब ग्रास ही उसने खाया, बहुत चेष्टा करनेपर भी उसे और देख-समझकर ही अब यह कहता हूँ कि इस स्थानमें अधिक न खिलाया जा सका। अन्तमें थोडा-सा दुध सब कुछ अद्भुत है! इस बार मथुरामें पदार्पण करनेके

संख्या २] विलक्षण प्रेम औ	र विलक्षण कृपा ३३
**************************************	**************************************
दिनसे ही सब कुछ अद्भुत, अपूर्व और अप्रत्याशित	आनेमें देर है न? रुक-रुककर, धीरे-धीरे अतीव मृदु
अनुभव हो रहा था। यह सब ऐसा आकर्षक था कि	स्वरमें ही उसने पूरा किया।'
मैं स्तम्भित हो रहा था।	'राधाकुण्डकी कुछ बात सुनाओगे क्या? मुझे
अब साँझ होनेको आ गयी। यमुना-तीरपर खूब	सुनकर आनन्द होता है।' मेरे मुँहसे इतना सुनते ही
हवा चल रही थी। परंतु योगीकी ओर देखनेपर ऐसा	उसके मुख-मण्डलपर गहरे आनन्दकी पुलक, साथ ही
लगता था मानो आकाश-बाकाशका कुछ भी कार्य	उसके शरीरमें एक अनिर्वचनीय सिहरनकी तरंग खेल
उसके लिये इन्द्रियगोचर नहीं था। मेरी बात करनेकी	गयी। उसके चेहरेपर एक दिव्य ज्योति फूट पड़ी,
प्रबल इच्छा हो रही थी। सोचा, क्या पूछनेपर कुछ नहीं	जिसका वर्णन करना असम्भव है।
बोलेगा? 'हरि हरि' शब्दका उच्चारण इस तरह करने	'क्या कहूँ ? वहाँका आसमान मुहब्बतसे भरा हुआ
लगा, जिसमें उसे सुनायी दे जाय। मेरी मनोवांछा पूर्ण	है, मुहब्बतको ही हवा चलती है, वह क्या कहनेकी
हुई। उसने मेरी ओर देखा। मैंने कहा, 'बाबाजी! तुम्हें	बात है साधुजी? वहाँ सखा-सखी इस तरह मिल-
क्या कष्ट है?'	जुलकर घूमते-फिरते हैं मानो आनन्दसे नाचते हों।
वह धीरे-धीरे बोला—'कष्ट! मुझे तो कोई कष्ट	उनकी बातें, गाना, हर एक सुर ऐसा है कि कानमें पड़ते
नहीं—मैं तो वृन्दावनमें हूँ—जब मैं मथुरामें अपने घरमें	ही बेहोश कर देता है दोस्त। थोड़ी देर भी वहाँ रहनेपर
था, माँ, बाप, भाई सब मुझे न समझते थे, मुझे कितना	आदमी पागल हो जाता है। आ हा।'
मारते थे—मैं उनके मनमाफिक नहीं हो सका इसलिये'	कुछ क्षण स्थिर, समाहित रहा और फिर बोला—
आह ! अब उस बातकी जरूरत नहीं।' जरा रुककर फिर	'वहाँ क्या रौनक है, उनका चेहरा अगर देखते सन्तजी,
बोला—'वे यह नहीं जानते कि ईमान क्या चीज है,	ऐसी मूरत है, बस, बहिश्तका रूप; उनके पाँवोंमें
इसीसे उन्हें डर था कि मेरा ईमान बरबाद हो जायगा,	पायलकी आवाज कितनी तेज और मधुर है—आह! मेरे
मैं काफिर हो जाऊँगा, 'वही तो लाड़ली, वही जो	कृषनजी, मेरेमेरी जिन्दगी कामयाब। इतना
कन्हइया' यह कहते-कहते उसकी आँखोंसे झर-झर	कह वह आगे न बोल सका। मैं कुछ कहने ही जा रहा
आँसू झरने लगे। तनिक रुककर फिर बोला—'कितनी	था कि अतीव मृदु स्वरमें वह फिर बोला—'वंशीपीठमें
मेहरबानी, गोविन्दजी शीरीराधाकी-राध-रा—आह', बस	बैठे हुए उनकी बाँसुरी सुनते ही बाबाजी! वह तानजिन्दा
और मुँहसे कुछ न निकला, धीरे-धीरे ऐसी अवस्था हो	सुरजैसे छातीमें पैठ जाता है। मैं जाऊँगा, वहाँ
गयी; जैसे संज्ञाशून्य होनेपर होती है। उसके नेत्र वैसे	जाऊँगा'''''फिर वापस नहीं आऊँगा, नहीं'''''।' झर–
ही अपलक थे। ऐसी अस्वाभाविक आँखें थीं कि उन्हें	झर अश्रुजल झरने लगा, वह निर्वाक् हो गया।
देखकर डर लगता था। मैं बस देखे जा रहा था। थोड़ी	उसके सांनिध्यमें आनन्दकी अतिशयतासे मेरी भी
देर बाद वह बोला—'दोस्त! तुम जानते हो राधाकुण्ड	चैतन्य-लोप-जैसी अवस्था हो गयी। किंतु मेरी वह
कहाँ है ?' और व्याकुल भावसे मेरी ओर ताकने लगा।	अवस्था दीर्घकालतक नहीं रही। उस किशोर योगीकी
मैं बोला—'जानता हूँ।' इतना सुनते ही महान्	प्रत्यक्षदर्शी शक्तिके लिये सब कुछ जीवन्त सत्यसे
उत्साहके साथ बोला—'तो मुझे वहाँ ले चलोगे ?' फिर	ओतप्रोत था। भला उसका इतना मर्मस्पर्शी वर्णन सुनकर
न जाने क्या उसके मनमें आया, कुछ सोचने-जैसा भाव	भी कौन ऐसा पशु होगा, जो वहाँ स्वयं जाकर प्रत्यक्ष
बनाकर तुरन्त बोल उठा—'ना, ना, वहाँ तो तुम जा ही	दर्शन करनेकी तीव्र लालसासे अभिभूत न हो जाय। मेरे
नहीं सकते। व्रजरानीकी दया हुए बिना तो वहाँ कोई जा	मनमें उत्तरोत्तर लोभ बढ़ने लगा। जैसे ही देखा कि
ही नहीं सकता, मुझे चम्पा सखी ही ले जायगी, उसके	उसकी अवस्था कुछ-कुछ बहिर्मुखी हो रही है, मैं बोल

उठा, 'बाबाजी! तुम्हारे-जैसा सौभाग्य सबको प्राप्त नहीं भी ऐसी पोशाकमें नहीं देखा था। सब कुछ अत्यन्त होता। मुझपर जरा दया करोगे? मुझे भी कुछ दिखाओगे?' पतला, इतना हल्का मानो उड़ रहा हो, स्थूल जरा भी यह सुनकर उसे पुरा बाह्य ज्ञान हो गया, बोला— न हो। उसकी अपूर्व गति एक मनोहर सौन्दर्यकी सृष्टि 'आह! मेरे दोस्त! क्या मेरे लिये यह मुमकिन है ? मुझमें कर रही थी। क्या ताकत है? वहाँ तो चम्पा सखी ही तुम्हें ले जा बालकको स्पर्श करते ही वह उठ खडा हुआ। सकती है। वहीं मेरी गुरु है, वहीं मेरी आँख है, उसके निर्वाक् चम्पा आगे-आगे चल रही थी और उसके बिना तो मैं अपने-आप किसी तरह भी नहीं जा पीछे-पीछे वैरागी किशोर। धीरे-धीरे मेरी आँखोंके सम्मुख ही वे दोनों अन्तर्धान हो गये। एक विलक्षण सकुँगा।' इसी समय दूर चम्पाकी मूर्ति दिखायी दी। देखते आच्छन्न भावसे जड़ीभूत होकर मैं बहुत देरतक वहीं ही वह किशोर 'अब जाऊँगा, देखूँगा, श्यामसुन्दर, बैठा रहा। राधका रानी "" कहता-कहता मानो स्थिर हो गया, दूसरे दिन सन्ध्यासे कुछ पूर्व फिर वहाँ गया, जहाँ उसके नेत्र स्थिर और विस्फारित हो गये, आगे कुछ न यमुना-तटपर तीन वृक्षोंके बीच त्रिकोण क्षेत्रमें उस

भाग ९३

बोल सका, एकदम भावाविष्ट अवस्था हो गयी। किशोर वैरागीका आसन था। आज वह आसन शून्य इतनेमें चम्पा पास आ गयी। उसका रूप देखकर था-वहाँ कोई न था। उसके बापको तो अब खबर में स्तम्भित हो गया। यह तो वह व्रजनारी नहीं, जिसने देनेका कोई प्रश्न ही नहीं था। पहले दिनकी अपूर्व

मुझे यहाँ रहनेके लिये कहा था, वेषभूषा भी तो वह अलौकिक लीलाको ही स्मरण करता हुआ, आश्चर्यपूर्ण नहीं ? यह तो एक अपूर्व ही वेष था, अबतक किसीको आनन्दकी लहरोंमें हिलोरें खाता हुआ वापस आ गया। युगलसरकार-प्रार्थना पुत्रमित्रगृहाकुलात् । गोप्तारौ मे युवामेव प्रपन्नभयभञ्जनौ॥ योऽहं ममास्ति यत्किञ्चिदिह लोके परत्र च। तत् सर्वं भवतोरद्य चरणेषु अहमस्म्यपराधानामालयस्त्यक्तसाधनः । अगतिश्च ततो नाथौ भवन्तावेव मे गति:॥ तवास्मि राधिकाकान्त कर्मणा मनसा गिरा। कृष्णकान्ते तवैवास्मि यवामेव वां प्रपन्नोऽस्मि करुणानिकराकरौ। प्रसादं कुरुतं दास्यं मिय दुष्टेऽपराधिनि॥ इत्येवं जपता नित्यं स्थातव्यं पद्यपञ्चकम्। अचिरादेव तद्दास्यिमच्छता श्रीलाड़िलीजी एवं लालजी! आप दोनों शरणागतवत्सल हैं। आप ही हमारे स्वामी एवं रक्षक हैं। पुत्र, मित्र, गृह आदिके बखेड़ोंसे भरे संसार-सागरसे आप ही हमें बचा सकते हैं। इस लोकमें अथवा परलोकमें जो कुछ मेरा है और जो कुछ मैं हूँ, आप दोनोंके श्रीचरणकमलोंमें समर्पित है। मैं अपराधोंका खजाना हूँ। सारे साधन मैंने छोड़ दिये हैं। मेरी स्वामिनी

और स्वामी! मुझ निरुपायको एकमात्र आप दोनोंका ही सहारा है। श्रीराधारमण! मैं कर्म, मन और वाणीसे आपका हूँ। श्रीकृष्णप्राणाधिके राधिके! मैं आपका ही हूँ । बस, केवल आप दोनों ही हमारे आश्रय हैं । हे करुणामय! मैं आप दोनोंकी शरण आया हूँ। यद्यपि मैं दुष्ट और अपराधी हूँ, फिर भी आप कृपा करके मुझे यह वरदान दीजिये कि मैं निरन्तर आपकी सेवामें संलग्न रहूँ । भगवान् शंकर कहते हैं—देवर्षि नारद ! जो शीघ्र–से–शीघ्र श्रीयुगलसरकारकी सेवाके लिये लालायित ॕऀॿॏ॔ज़ॖॖॖॖॖॹॹ॓॔ड़ऻऀॡॱॶऻड़ढ़ॶय़॔ॱॾॿॣॡॺऻॹॎॾॱॎॾढ़॔ड़ॿॖॶॺ॓ॸॾग़ॸॻॿॎऄॴय़ॿॾॱऒॻॸऻढ़ॶढ़ऄ॔

संख्या २] श्रीराधामाधवके परम त्यागी कक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्	भक्त गोस्वामी रघुनाथदास ३५ कक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रकक्रक
संत-चरित— श्रीराधामाधवके परम त्यागी	भक्त गोस्वामी रघुनाथदास
———— सच्चे महात्मा श्रीरघुनाथदासका जन्म आजसे लगभग	रघुनाथदासके मनमें भोगोंकी परिणाम-दु:खमयता
चार सौ वर्ष पूर्व बंगालके श्रीकृष्णपुर नामक स्थानमें	तथा असारताका प्रत्यक्ष हो रहा था, इससे उनका जीवन
सप्तग्रामके बहुत बड़े जमींदार श्रीगोवर्धनदासके घर हुआ	सर्वथा विरक्त-सा रहने लगा। विषयीकी दृष्टिमें जो
था। गोवर्धनदास जातिके कायस्थ थे। राज्यकी ओरसे इन्हें	आनन्दकी वस्तु है, वही विषय-विरागीकी दृष्टिमें भयानक
'मजूमदार' उपाधि मिली हुई थी। इनकी वार्षिक आय थी	और त्याज्य होती है। यही दशा श्रीरघुनाथदासकी थी। पिता
बारह लाख रुपये। जिस जमानेमें एक रुपयेके कई मन	गोवर्धनदासने पुत्रकी ऐसी मनोदशा देखकर एक अत्यन्त
चावल मिलते थे, उस जमानेके बारह लाख आजके बारह	सुन्दरी रूप-लावण्यमयी कन्याके साथ उनका विवाह कर
करोड़के बराबर समझिये। इतने बड़े सम्पत्तिशाली और	दिया। शील-संकोचवश तथा अन्यमनस्क रघुनाथने विरोध
आमदनीवाले गोवर्धनदासके एकमात्र पुत्र थे रघुनाथदास!	नहीं किया।
इनके कुलपुरोहित थे श्रीबलराम आचार्य और	कुछ समय बाद रघुनाथको पता लगा कि महाप्रभु
रघुनाथदासने उन्हींसे विद्या पढ़ी थी। एक समय श्रीचैतन्य	श्रीचैतन्य शान्तिपुरमें श्रीअद्वैताचार्यके घर पधारे हुए हैं। यह
महाप्रभुके अनन्यभक्त श्रीहरिदास बलरामजीके घर आकर	सुनते ही रघुनाथदास शान्तिपुर गये। गोवर्धनदासने पुत्रकी
ठहरे थे। रघुनाथदास उस समय वहीं थे। श्रीहरिदासजीके	देख-रेख तथा उसे वापस लौटा लानेके लिये विश्वासी
मुखसे वहाँ उन्होंने पहले-पहले श्रीचैतन्यमहाप्रभुकी महिमा	पुरुषोंको साथ भेजा। रघुनाथदास महाप्रभुके चरणोंमें
सुनी और श्रीहरिदासको कीर्तन करते हुए प्रेममग्न देखा,	उपस्थित हुए। महाप्रभुने उनसे बातचीत की। अभी
तभीसे इनके मनमें भगवान्की ओर लगन लग गयी।	वैराग्यमें कुछ कचाई मालूम दी, इसलिये बड़े स्नेहसे
इन्हें संसारके भोग बुरे मालूम होने लगे और भगवान्के	महाप्रभुने रघुनाथसे कहा—
विशुद्ध प्रेममार्गमें पहुँचनेके लिये इनके मनमें महाप्रभु	यों मत पागल बनो, चित्त स्थिर कर जाओ घर।
चैतन्यके दर्शनकी प्रबल लालसा जाग उठी।	क्रम-क्रमसे ही तरता है मानव भवसागर॥
रघुनाथदास अब युवावस्थाको प्राप्त हो गये। अतुल	उचित नहीं करना मर्कट-वैराग्य दिखाकर।
ऐश्वर्यके एकमात्र उत्तराधिकारी थे ये, पर जिनके सामने	अनासक्त हो, भोगो युक्त विषय तुम जाकर॥
भगवत्कृपासे भोगोंका असली स्वरूप प्रकट हो जाता है,	भीतरसे निष्ठा करो, बाहर जग व्यवहार।
जो भोगोंकी विषमताको जान लेते हैं और भगवान्के	तुरत तुम्हारा करेंगे, कृष्ण चरम उद्धार॥
मधुरतम अनन्त सौन्दर्य-माधुर्यकी कल्पना जिनके मनमें	'भैया! यों पागलपन मत करो, मन स्थिर करके
परम विश्वासके साथ जम जाती है, उन्हें ये भोगबहुल	घर जाओ, मनुष्य क्रम-क्रमसे ही योग्यता प्राप्त करके
घर-द्वार कैसे अच्छे लग सकते हैं? उनका मन कैसे	भवसागरसे पार हुआ करता है। लोगोंको दिखाकर
इनमें रम सकता है। भगवान्ने गीतामें कहा है—	मर्कट-वैराग्य नहीं करना चाहिये। अभी तुम घर लौटकर
ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।	भोगोंकी आसक्ति छोड़कर उचित भोगोंका भोग करो।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥	अन्दर भगवान्में निष्ठा रखो, बाहरसे यथायोग्य जगत्का
(5155)	व्यवहार करो, श्रीकृष्ण तुम्हारा शीघ्र ही उद्धार करेंगे।'
'इन्द्रिय तथा विषयोंके संयोगसे उत्पन्न होनेवाले	रघुनाथ घर लौट आये और महाप्रभुके आज्ञानुसार
ये जो भोग हैं, वस्तुत: दु:खकी उत्पत्तिके स्थान और	अनासक्त होकर जगत्का कार्य करते हुए अपनेको योग्य
आदि-अन्तवाले हैं, अतएव अर्जुन! बुद्धिमान् पुरुष इनमें	बनाने लगे। कुछ वर्षों बाद पानीहाटीमें श्रीनित्यानन्द
रमण नहीं करता।'	प्रभुका उत्सव चल रहा था। रघुनाथने पानीहाटी आकर

भाग ९३ कल्याण उनके दर्शन किये और श्रीचैतन्य-चरणोंकी प्राप्तिके लिये तब कुछ देर बाद रघुनाथदासको चेत हो आया। उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। महाप्रभुने उन्हें उठाकर जोरोंसे हृदयसे चिपटा लिया और रघुनाथ फिर घर लौट आये, पर उनके मनमें श्रीस्वरूप गोस्वामीजीसे कहा—'स्वरूप! मैं रघुनाथको व्याकुलता बढ़ती गयी। वे नीलाचल (पुरी) जाकर तुम्हारे हाथोंमें सौंप रहा हूँ।' रघुनाथकी वैराग्यमूर्ति देखकर महाप्रभ् बडे प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा— महाप्रभुके चरण प्राप्त करनेके लिये अत्यन्त आतुर हो 'भजनका असली आनन्द संयम और वैराग्यके द्वारा ही उठे। हृदयमें भयानक व्याकुलता और आँखोंसे निरन्तर बहती हुई सलिलधारा—यही उनका जीवन बन गया। प्राप्त होता है और संयमी तथा सच्चे विरक्त भक्तोंको ही भगवान् जिसको अपने पास बुलाना चाहते हैं, उसके श्रीकृष्णकी प्राप्ति होती है-जीवनमें स्वाभाविक ही यह स्थिति आ जाती है। वह फिर इत उत जो धावत फिरै रसना-रस बस होय। सहन नहीं कर सकता—क्षणभरका विलम्ब। अनन्य और पावे निहं श्रीकृष्ण कौं सिस्नोदर-पर सोय॥ तीव्रतम लालसा उसको केवल भगवान्की ओर खींच ले तदनन्तर श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रीरघुनाथदासको पाँच जाती है। उसे अपने-आप पथ प्राप्त हो जाता है। उपदेश दिये-पिताने रघुनाथका सारा भार सौंप दिया था श्रीयदुनन्दन (१) (भगवच्चर्चाके सिवा) लोकचर्चा, ग्राम्य-कथा न कभी सुनना और न कभी करना। आचार्यको। अतः रघुनाथदास एक दिन रात्रिके समय अपने आचार्यजीके पास गये और उनसे महाप्रभुके पास (२) बढ़िया चीजें न खाना और बढ़िया कपड़े न जानेकी आज्ञा माँगी। गुरुदेवने पता नहीं क्यों, यन्त्रचालित पहनना। कठपुतलीकी भाँति कह दिया—'हाँ, जा सकते हो।' बस, (३) स्वयं मानरहित होकर सबको मान देना। फिर क्या था, रघुनाथ उसी क्षण चल दिये। अतुल ऐश्वर्य, (४) सदा श्रीकृष्णनामका जप करना। और अप्सराके समान रूपवती पत्नी, जन्मदाता पिता कोई भी (५) मानस-व्रजमें श्रीराधाकृष्णकी सेवा करना। उनको नहीं रोक सके। कभी सुनो मत लोकवार्ता कभी करो मत जान असार। पीछेसे लोग आकर कहीं रास्तेमें पकड़ न लें, कभी न बढ़िया खाओ बढ़िया पहनो, तजो साज-शृंगार॥ इसलिये रघुनाथदास सीधा रास्ता छोड़कर गुप्त मार्गसे स्वयं अमानी मानद होकर कृष्णनाम-जप-गान करो। चले। कहीं घना बीहड जंगल, कहीं कॉॅंटे-कंकडसे भरी मानस व्रजमें लाल-लाड़िलीका नित पूजन-ध्यान करो॥ पगडण्डी, कहीं भयानक सिंह-बाघोंकी गर्जना, न खाना न पाँचों ही उपदेश प्रत्येक सच्चे भक्ति-साधकके पीना, अनजान रास्ता—िकसीका कुछ भी ध्यान नहीं है। लिये आदर्श हैं। नहीं तो मनुष्य परनिन्दा-परापवाद, चले जा रहे हैं नींद-भूख भूलकर। लगातार बारह दिन खाने-पहननेके पदार्थींकी आसक्ति, प्राणी-पदार्थ-बीहड़ पथसे पैदल चलकर रघुनाथदास नीलाचल पहुँचे परिस्थितिके अभिमान, व्यर्थ वार्तालाप तथा असार और वहाँ श्रीकाशी मिश्रके घर जाकर महाप्रभुके चरण-दुःखमय जगत्के चिन्तनमें लगकर भक्तिसाधनासे सर्वथा दर्शन कर सके। महाप्रभु वहाँ भावुक मण्डलीसे घिरे थे। गिर जाता है। उधर रघुनाथदासके पिता गोवर्द्धनदासको जब पता महाप्रभुके श्रीचरणोंमें लकुटीकी तरह पड़कर भावाविष्ट रघुनाथने कहा—'प्रभो! में श्रीकृष्णको नहीं लगा, तब उन्होंने कुछ धन तथा आदमी नीलाचल भेज जानता, इतना ही जानता हूँ कि आपकी कृपाने ही मुझे दिये। रघुनाथकी इच्छा हुई महाप्रभुको महीनेमें दो बार जालसे निकाला है।' महाप्रभुके दर्शनका आनन्दरस बुलाकर भोजन कराया जाय। इस उद्देश्यसे वे पिताके उमड्कर रघुनाथके नेत्रोंसे पवित्र अश्रुधाराके रूपमें बह भेजे हुए धनमेंसे कुछ लेकर उसे महाप्रभुकी सेवामें चला। उनका शरीर अचेतन होकर प्रभुके चरणोंमें गिर लगाने लगे। परंतु कुछ ही समयमें रघुनाथ इस बातको पडा। महाप्रभुके परिकर श्रीकृष्णनाम-कीर्तन करने लगे, जान गये कि महाप्रभु उनके संकोचसे सेवा स्वीकार

वृषभानुकिसोरीकी दिव्य छटा संख्या २] इस प्रकार सोलह वर्ष तीव्र भक्ति-साधना करते हैं; परंतु उनके मनमें इससे प्रसन्नता नहीं है—तब उन्होंने विचार किया कि 'ठीक ही तो है, अन्नसे ही मन करनेके बाद श्रीमहाप्रभुके अन्तर्धानके बाद श्रीरघुनाथदास वृन्दावनमें 'राधाकुण्ड' पर आ गये। यहाँ उनके जीवनका बनता है। विषयीके अन्नसे मन मलिन होता है और मिलन मनसे श्रीकृष्णका स्मरण नहीं होता-कार्यक्रम था— विषयी-जनके अन्नसे होता चित्त मलीन। अन्न-जलका त्याग करके ये नियमित दो-चार मिलन चित्त रहता सदा कृष्ण-स्मृतिसे हीन॥ घूँट मट्ठा लेते। एक हजार दण्डवत् करते, लाख नामका जप करते, प्रतिदिन दो हजार वैष्णवोंको प्रणाम इसी क्षणसे रघुनाथदासने महाप्रभुको बुलाकर जिमाना छोड दिया और स्वयं भी उस अर्थसे सर्वथा करते। दिन-रात श्रीराधा-माधवकी मानस-पूजा करते, अलग हो गये। शरीर-निर्वाहके लिये वे मन्दिरके द्वारपर एक प्रहर रोज महाप्रभुका चरित्रगान करते, प्रात:-बैठकर नाम-कीर्तन करते और भीखमें जो मिल जाता, मध्याह्न-सायं तीनों काल श्रीराधाकुण्डमें पवित्र स्नान उसीसे काम चलाते। पर वहाँ भी बडे आदमीका लडका करते, व्रजवासी वैष्णवोंका आलिंगन करते। इस प्रकार समझकर लोग कुछ बढ़िया चीज देने लगे, तब इन्होंने साढ़े सात पहर रसमयी प्रेमाभक्तिकी साधनामें बिताते। सोचा कि 'मन्दिरके सिंहद्वारपर बैठकर भिक्षा करना तो केवल चार घड़ी सोते, सो भी किसी-किसी दिन नहीं। वेश्याका आचार है।' इसे भी छोड दिया। इस प्रकार वैष्णवचूडामणि गोस्वामी श्रीरघुनाथदासने फिर अयाचक-वृत्तिसे कुछ दिन माधुकरी भिक्षा महान् आदर्श दैन्यपूर्ण, तपोनिष्ठ, संयम-नियमपूर्ण, की। तदनन्तर इसका भी त्याग कर दिया। अब वे भक्ति-प्रेमप्लावित जीवन बिताकर श्रीराधामाधवका अनन्य मन्दिरके आँगनमें बिखरे हुए भातके दानोंको बटोरकर प्रेम प्राप्त किया। उन्हें धोकर उन्हींसे पेट भरने लगे। महाप्रभुको करके त्याग अन्न-जल पूरा लेते थोड़ा मट्ठा माप। रघुनाथदासकी इस वृत्तिसे बड़ा ही अनुपम आनन्द एक सहस्र दण्डवत करते, करते लक्ष नामका जाप॥ प्राप्त हुआ। वे एक दिन अचानक पहुँचे और रघुनाथके प्रतिदिन करते दो सहस्र वैष्णव जनको अति नम्र प्रणाम। हाथसे इस महाप्रसादको छीनकर बोले—'रघु! तुम मानस-सेवन राधामाधवका दिनरात जो यह देवदुर्लभ अन्न प्रतिदिन पा रहे हो, इसके एक पहर करते प्रतिदिन श्रीमहाप्रभुका मधु लीला-गान। सम्बन्धमें तो कभी कुछ नहीं कहा, न मुझे कभी राधाकुण्ड-सलिलमें पावन-स्नान॥ तीनों संध्या करते कुछ इसका हिस्सा ही दिया।' महाप्रभुकी यह लीला व्रजवासी वैष्णवको करते सदा समुद आलिंगन दान। देखकर रघुनाथ व्याकुल होकर रोने लगे—'अहा, मेरे साढ़े सात पहर करते यों भक्ति-प्रेम-साधन रसखान॥ समान अभागेके उद्धारके लिये ही महाप्रभुने ये दाने चार घड़ी सोना केवल, पर उसमें भी होता व्यवधान। खाये हैं।' श्रीरघुनाथदास गोस्वामी वैष्णवाग्र आदर्श महान॥ वृषभानुकिसोरीकी दिव्य छटा कंचन-गोरी॥ माधव हरत * अनियारे-रतनारे लोचन सौं, भौंह मरोरी। राधा कछ * करधनि-धुनि मनु मधु रस-घोरी॥ दोउ चरन महावर, * मुकता-मनि-हार हदै, हँसनि ठगोरी। दरपन सोहत, मृदु * मन-रंजन, चित्त-बित्त-हर बरजोरी॥ नयननि नित * सरदिंदु-बदन-दुति, नील बेंदी सेंद्र-केसर-रोरी। बसन, * मन्मथ-मन्मथ-मन दिब्य बृषभानुकिसोरी॥ मथत छटा * सहज

'जिन खोजा तिन पाइयाँ' कहानी-(श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')

कहते हैं कि कोई राजा शत्रुसे पराजित होकर भागा। उसने कई बार सैन्य एकत्र करके शत्रुपर

'जय मैया'का प्याला चढ़ानेवाले और केवल फलाहारी या दुग्धाहारी भी मिले। भोगी, योगी, सिद्ध, पाखण्डी, आक्रमण किया, पर सफल न हो सका। भागकर वह जिस गुफामें छिपा था, उसमें एक मकडी एक स्थानपर भक्त, ज्ञानी, याज्ञिक प्रभृति सबके दर्शन हुए। सब हुआ,

अपना तन्तु लगाकर दूसरे स्थानको उछाल मार रही थी। वह अपना तन्तु वहाँतक पहुँचाना चाहती थी। राजा चुपचाप मकड़ीको देखने लगा। मकड़ी उछलती और विफल होकर गिर जाती। बार-बार यही क्रम चलता रहा। अंतमें मकड़ीने अपनी विफलताओंपर विजय पायी। भूपतिने मकड़ीसे शिक्षा ली, उन्होंने निराशा

त्यागकर शत्रुपर प्रत्याक्रमण किया। संयोगवश इस बार विजयलक्ष्मीने वरमाला उन्हींके गलेमें डाली। जरासन्ध मथुराकी सत्रह चढाइयोंमें बुरी तरह पराजित हुआ, पर उसने भी अंतमें विजय लेकर छोडी।

मैंने अपनी आँखों देखा है कि लोग प्रयागमें त्रिवेणीजीके गम्भीर जलमें पैसे छोड़ते हैं और मछुए डुबकी लगाकर उन्हें निकाल लेते हैं। एक, दो, चार, दस—चाहे जितनी

डुबिकयाँ लगानी पड़ें, वे पैसेको निकाल ही लेते हैं। पाश्चात्त्य लोगोंने उस धधकते हुए मरुस्थल सहारा (अफ्रीका)-में नील नदीका उद्गम ढूँढ निकाला। अपने सिरपर चमकते हुए उस लाल-लाल तारे (मंगल)-का

पता पा लिया। जब लोग इतनी कठिन-कठिन वस्तुओंको

प्राप्त कर लेते हैं तो क्या मैं अपने लक्ष्यको नहीं पा

सकता ? देखुँ; असफलता कबतक मेरा पीछा करती है। या तो मैं ही रहूँगा या यह विफलता ही। लगातार पाँच वर्षसे इस ओर लगा हूँ। न दिनको चैन, न रात्रिमें विश्राम। कभी जंगलोंमें, कभी पर्वतोंपर,

कभी नगरोंमें, कभी नदियोंके किनारे—सभी प्रकारके स्थानोंमें गया। मेरी रात्रि कभी घोर वनमें शिलाके ऊपर, कभी धर्मशालामें, कभी किसी सूने मन्दिरमें और कभी किसी

पथके वृक्षतले बीतती है। सभी रंगके साधुओंको देखा—

तथा नंगे भभूतिये भी। मुझे 'बं शंकर की दम लगानेवाले,

पर मुझे मेरे योग्य गुरु न मिले। न मेरा भटकना बंद हुआ और न मुझे मेरे अनुरूप कोई मिला ही। बहुतोंने मुझपर दया की, दीक्षा देनेको भी बहुत तत्पर थे। जिनके दर्शनोंको लोग तरसते हैं, वे महापुरुष,

सिद्ध योगी भी मेरे ऊपर प्रसन्न हुए। मैं चाहता तो वे भी मुझे अपने चरणोंमें रख लेते, पर मैं चाहता तब तो! मैं जो चाहता था, वह वहाँ भी मुझे नहीं मिला। मेरी

अभीष्टसिद्धि वहाँ भी दिखायी न दी! आप सोचते होंगे कि मैं ऐसी क्या विशेषता चाहता था। मैं सिद्ध या त्रिगुणातीतके फेरमें नहीं था। बात यह है कि मैं न तो अपनेपर विश्वास करता और न अपने मनपर।

सभी महापुरुष साधन बतलाना चाहते थे—'साधन करो, आत्मोद्धार होगा।' बात तो ठीक थी, पर साधन करे कौन ? मुझे विश्वास नहीं कि मैं साधन कर सक्रँगा। मैं तो एक ऐसा गुरु चाहता था, जो कह दे '**अहं त्वा सर्वपापेभ्यो** मोक्षयिष्यामि' जो मेरा पूरा उत्तरदायित्व ले ले। चाहे

न अपने अच्छे कर्मोंका उत्तरदायी रहूँ न दुष्कर्मींका। मुझसे साधन हो तो ठीक और मैं अहंकारी रहूँ तो ठीक। सब वही जाने, मैं कुछ न जानूँ। ऐसा उत्तरदायित्व लेनेवाला मुझे कोई कहीं भी नहीं मिला।

साधन करावे या तपस्या, पर मनको उस साधनमें प्रवृत्त

रखनेका भार उसपर हो। जो भी कराना हो करावे, पर मैं

(२) निराश हो चुका था। भटकता हुआ व्रजमें पहुँचा। कई दिनका भूखा था, मुझे पता नहीं किसने लाकर वे

रोटियाँ दीं। वे एक वृद्ध महात्मा थे, इतना ही जानता हूँ। बिना माँगे वे रोटियाँ लेकर आये और बोले—'तुम

िभाग ९३

संख्या २] 'जिन खोजा	तिन पाइयाँ' ३९
*************************************	**************************************
उस शाकके संग मुझे रोटियोंमें अमृतका स्वाद आया।	लगा। निश्चय किया कि अब तो उनके दर्शन करके ही
मैं पूछ भी न सका, भोजन करके देखता हूँ तो	अन्न या जल ग्रहण करूँगा। यदि शरीरको छूटना ही
महात्माजी दिखायी नहीं दिये।	हो तो यहीं छूटे। भूखे-प्यासे चलना कठिन तो अवश्य
गोवर्धन आया और वहाँसे चन्द्रसरोवर गया। एक	हो गया; फिर भी जितना हो सकता था, चलता था।
वृद्ध महात्मा वहाँ रहते थे। इतने प्रेमसे मिले मानो मैं	इस प्रकार भी छ: दिन व्यतीत हो गये।
उनका चिरकालसे वियुक्त पुत्र होऊँ। उनके प्रेमने हृदयके	(\$)
बाँधको तोड़ दिया। मैं उनके चरणोंके समीप बैठकर	रात्रिके बारह बजे होंगे। मेरी नींद खुली, पूर्णिमाके
फूट-फूटकर रोने लगा। उन्होंने मुझे आश्वासन दिया,	चन्द्रमाकी ज्योत्स्नासे वनभूमि आलोकित हो रही थी।
आँसू पोंछे और रोनेका कारण पूछा। धीरे-धीरे मैंने	में शिलापरसे उठ बैठा। एक बहुत सुन्दर-सा बछड़ा
अपने भटकनेका सारा वृत्तान्त कह सुनाया, अपने	आया और मेरी शिलाको सूँघकर उछलता हुआ एक
उद्देश्यको भी निवेदन किया। वे थोड़ी देर मौन रहे। कुछ	ओर दौड़ गया। मैंने सोचा किसीका बछड़ा छूट गया
सोचकर कहने लगे—'भटकना व्यर्थ है; मैं यह तो नहीं	होगा; पर दृष्टि उठाते ही बहुत-सी गायें और बछड़े
कहता कि महापुरुषोंमें तुम्हारे उद्देश्यको पूर्ण करनेकी	चरते हुए दीख पड़े। 'इतनी रात्रिमें कौन गायें चरा रहा
शक्ति नहीं है, पर ऐसे महापुरुषोंको इस प्रकार भटकनेसे	है ?' मैं चरवाहेको देखने उठा।
नहीं पाया जा सकता। ऐसे महापुरुषोंको पाना और	पता नहीं मेरी अशक्ति कहाँ चली गयी थी। शरीरमें
श्यामसुन्दरको पाना एक ही बात है। इस गिरिराजकी	विलक्षण स्फूर्ति थी। मैं गायोंके पास गया, पर वहाँ कोई
तलहटीमें बहुतोंने उस नन्दनन्दनको पाया है। तुम भी	चरवाहा नहीं दिखायी पड़ा। एक कुंजसे कुछ शब्द आ
अन्वेषण करो, सम्भव है पा सको। तुम्हारा अभीष्ट	रहे थे, मैं उधर ही बढ़ गया। मैंने बाहरसे ही पुकारा—
सिद्ध होगा। यदि गुरु ही चाहिये तो उसका पता वही	'अरे इतनी रात्रिको कौन गायें लाया है?' कुछ लड़के
बता सकेंगे। मुझे कोई दूसरा मार्ग तो दीखता नहीं।'	कुंजसे निकल आये। वे लड़के कैसे थे? कैसे बताऊँ?
महात्माजीको प्रणाम करके मैं उनके स्थानसे लौट	देवता भी इतने सुन्दर होते होंगे ? संदेह ही है। उनमें एक
आया। अब मेरा एक ही काम रह गया—'प्रात: नेत्र	साँवले रंगका बालक था, उसे तो देखकर दृष्टि वहीं रुक
खुलते ही चल देना, जहाँ जल मिले वहीं नित्यकर्म	गयी। उसीने व्रजभाषामें कहा 'कहा है? गायनने तो
करके दिनभर गिरिराजकी परिक्रमा करते रहना। यदि	हम ल्याये हैं, पै तू इतनी रात कूँ इतै च्यों डोल रह्यो
कोई कुछ बिना माँगे खानेको दे दे तो ग्रहण कर लेना।	है ?' और वे सब मेरे समीप आ गये।
मुझे स्मरण नहीं कि वहाँ कभी उपवास करना पड़ा हो।	एकने कहा— 'दादा! यो बावरो भूखो सो लगै,
मैं सीधे मार्गसे परिक्रमा तो करता न था, कभी	याकूँ कछू खवावौ। उनमेंसे एक जो सबसे बड़े थे,
आस-पासकी कुंजोंको ढूँढ़ता और कभी गिरिराजके	गोरे-गोरे-से, उन्होंने कहा—' अच्छो, तू दूध तौ पी
ऊपर चढ़कर इधर-उधर देखता। कभी पीछे लौट	<i>ले।</i> भैंने सिर हिला दिया। 'च्यों ? तोय भूख नाय
पड़ता। वहाँके लोग मुझे पागल समझने लगे। मैं रात्रिमें	लगी ?" भूख तो लगी है, पर मैंने प्रतिज्ञा कर रखी है।'
किसी शिलापर लेट रहता, जैसे ही नेत्र खुलते, रात्रिमें	वे सब हँस पड़े। उस साँवले कुमारने कहा—' <i>प्रतिज्ञा</i>
भी इधर-उधर कुंजोंको देखने चल देता। फिर नींद	कहा करी है ?'उसमें कुछ ऐसा आकर्षण था कि मैं उन
आती तो किसी भी शिलापर सो रहता।	बच्चोंसे भी कुछ छिपा न सका। अनावश्यक था, फिर भी
मुझे इस प्रकार पूरे दो महीने बीत गये। जी ऊबने	मैंने अपनी सारी दशा कही, अपनी प्रतिज्ञा भी सुनायी।

ताली बजाकर वे सब हँस पड़े। ओह! उनके अमृत! पता नहीं मैं कितना पी गया। मुझे तो ऐसा लगता

भाग ९३

हास्यमें कितना आनन्द था! 'बावरो है, बावरो।' फिर है कि दो-चार सेर अवश्य पी गया होऊँगा। भर पेट

उस साँवलेने हँसते हुए कहा—'तृ मोकूँ गुरू *बनाय* पिया। दुध पिलाकर उन्होंने एक बछडेको, जो दुर भाग

ले। च्यों मोय गुरू बनावैगो ? देख इतै उतै बावरो गया था, घेर लानेको कहा। मैं उस बछडेको लौटाने चला। सो डोलियो नहीं, दादा ते कह दूँगो, बहुत मारैगो। चंचल बछड़ा मुझे देखते ही चौकड़ी भरकर

हाँ! मैं जो कछ कहँगो, सो तोय करनो परैगो। भागा। मैं उसके पीछे दौडा। सहसा किसी वृक्षकी ठोकर करनो तो कछ नायँ, मेरे ढोरनने घेर लायो करियो। लगी, मैं धडामसे गिर पडा। वे दौडे उठानेको।

खेलनमें तोकूँ छुट्टी। अच्छा ले, दादा! या कूँ दूध प्या। ना पीवै तो चाँटा मारकै प्या। वह हँसने लगा। सहसा नींद खुल गयी। 'अरे क्या यह सब स्वप्न

'देख, तू बावरो मत बनै। दादा तोय अपने संग था?' हुआ करे। मैंने प्रभुको प्रणाम किया। अवश्य ही राखेगो।' मैं उस चरवाहेकी बातोंको सुन रहा था। उन्होंने मुझे इस विशाल स्वप्नमें आदेश दिया है—

उसके बचपनपर मुझे बरबस हँसी आ गयी। 'उद्योग करो, सफलता तो निश्चित ही है। करना-

सचम्च उनके दादा (बडे भैया)-ने दुधका बर्तन कराना सब हमारे हाथमें है। प्रयत्न छोडो मत। हताश मेरे मुँहसे लगा दिया। वह गुदगुदाने लगा। अजी दुध होनेका कोई कारण नहीं। मैं तुम्हारे साथ हूँ।'

भी कहीं इतना स्वादिष्ट होता है ? वह अमृत होगा— 'जिन खोजा तिन पाइयाँ!'

श्रीराधाजीका 'आनन्दचन्द्रिका' नामक स्तोत्र

राधिका वार्षभानवी। समस्तवल्लवीवृन्दधिम्मिल्लोत्तंसमिल्लका॥१॥ राधा दामोदरप्रेष्ठा

दशनाममनोरमाम्। आनन्दचन्द्रिकां नाम यो रहस्यां स्तुतिं पठेत्॥ ३॥ वन्दावनेश्वर्या डमां

कृष्णप्रियावलीमुख्या गान्धर्वा ललितासखी। विशाखासख्यसुखिनी हरिहृद्भृंगमञ्जरी॥२॥

क्लेशरहितो भूत्वा भूरिसौभाग्यभूषितः। त्वरितं करुणापात्रं राधामाधवयोर्भवेत्॥४॥ **१. राधा**—श्रीकृष्णके द्वारा आराधित अथवा निर्वाणप्रदायिनी, २. दामोदरप्रेष्ठा—दामोदर नन्दनन्दनकी

प्रेयसी, ३. राधिका — श्रीकृष्णकी सर्वदा आराधना करनेवाली, ४. वार्षभानवी — वृषभानुजीकी पुत्री, ५.

समस्तवल्लवीवृन्दधिम्मिल्लोत्तंसमिल्लका—समस्त गोपांगनाओंके केशपाशको अलंकृत करनेवाली मिल्लका अर्थात् गोपरमणियोंमें सर्वश्रेष्ठ, ६. कृष्णप्रियावलीमुख्या—श्रीकृष्णकी प्रियतमाओंमें प्रमुख, ७. गान्धर्वा—

संगीतादि ललित कलाओंमें निपुण, ८. ललितासखी—ललितासखीके साथ विराजनेवाली,

विशाखासख्यसुखिनी—विशाखा सखीके सख्यभावसे सुखी होनेवाली, १०. हरिहृद्भृंगमंजरी—श्रीकृष्णके

मनरूप भ्रमरके आश्रयहेत् पुष्पमंजरीस्वरूपा॥ १-२॥

जो व्यक्ति वृन्दावनेश्वरी श्रीराधाके दस नामोंसे शोभायमान इस 'आनन्दचन्द्रिका' नामवाली गोपनीय

स्तुतिका (मननपूर्वक) पाठ करता है, वह (सभी) क्लेशोंसे मुक्त, प्रचुर सौभाग्यसे विभूषित तथा श्रीराधा-

माधवका कृपापात्र हो जाता है॥३-४॥

इति श्रीमद्रूपगोस्वामिविरचितस्तवमालायां श्रीराधिकाया आनन्दचन्द्रिकाख्य-दशनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्। ॥ इस प्रकार श्रीमद्रूपगोस्वामीविरचित स्तवमालामें श्रीराधिकाका आनन्दचन्द्रिकासंज्ञक दशनामात्मक स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

गोचरभूमिकी गौरव-गाथा संख्या २] गोचरभूमिकी गौरव-गाथा (श्रीगौरीशंकरजी गुप्त) वह भी एक युग था जब हमारे भारतवर्षमें गोचर-भी गोचरभूमिका वर्णन मिलता है। उन सबका सारांश भूमिकी प्रचुरता थी और निर्धन-से-निर्धन व्यक्ति भी संक्षेपमें यही है कि यथाशक्ति गोचरभूमि छोड़नेवालेको गायें पाल सकता था। गोचरभूमिमें चरनेवाली गायें हरी नित्य-प्रति सौसे अधिक ब्राह्मणभोजन करानेका पुण्य घास या वनस्पतिके प्रभावसे नीरोग और हृष्ट-पुष्ट रहतीं मिलता है और वह स्वर्गका अधिकारी होता है, नरकमें और उनका दुध सुपाच्य तथा पुष्टिकारक होता था। उन नहीं जाता। गोचरभूमिको रोकने या बाधा पहुँचानेवाले गायोंका मूत्र सर्व रोगों—विशेषकर उदर, नेत्र तथा तथा वृक्षोंको नष्ट करनेवाले इक्कीस पीढ़ीतक रौरव नरकमें कर्ण-रोगोंको समूल नष्ट करनेकी क्षमता रखता था। पड़े रहते हैं। चरती हुई गौओंको बाधा पहुँचानेवालोंको समर्थ ग्रामरक्षक दण्ड दे, ऐसा पद्मपुराणमें कहा गया है— आज गोदुग्ध-मूत्रादिमें वैसा चमत्कार न दीखनेका यही मुख्य कारण है कि हमारे देशमें गोचरभूमिकी समुचित गोप्रचारं यथाशक्ति यो वै त्यजित हेतुना। व्यवस्था नहीं है। पर, वैदिक युगमें गोचरभूमिका बड़ा दिने दिने ब्रह्मभोज्यं पुण्यं तस्य शताधिकम्॥ महत्त्व था। ऋग्वेद (१।२५।१६)-में एक मन्त्र है-तस्माद् गवां प्रचारं तु मुक्त्वा स्वर्गान्न हीयते। परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु। यच्छिनत्ति दुमं पुण्यं गोप्रचारं छिनत्त्यपि॥ इच्छन्तीरुरुचक्षसम्॥ तस्यैकविंशपुरुषाः पच्यन्ते रौरवेषु च। इसका भाव है कि गायें जिस तरह गोचरभूमिकी गोचारघ्नं ग्रामगोपः शक्तो ज्ञात्वा तु दण्डयेत्॥ ओर जाती हैं, उसी तरह उस महान् तेजस्वी परमात्माकी (सृष्टिखण्ड, अ० ५९, श्लोक ३८—४०) प्राप्तिकी कामना करती हुई बुद्धि उसीकी ओर दौड़ती पद्मपुराणमें वर्णित एक प्रसंगके अनुसार चरती हुई रहे। ईश्वरकी ओर बुद्धि लगी रहे, यह भाव व्यक्त गायको रोकनेसे नरकमें जाना पड़ता है। स्वयं महाराज करनेके लिये गायोंके गोचरभूमिकी ओर जानेका दृष्टान्त जनकको चरती हुई गायको रोकनेके फलस्वरूप नरकका दिया गया है। इसी प्रकार ऋग्वेद (१।७।३)-में एक द्वार देखना पड़ा था। सावधान रहकर आत्मरक्षा करना दूसरा मन्त्र है-कर्तव्य है; पर चरती गायको ही क्या, आहार करते समय इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्यं रोहयद्वि। वि जीवमात्रको रोकना या मारना मनुष्यता नहीं है। धार्मिक गोभिरद्रिमैरयत्॥ दृष्टिसे भी ऐसा करना अनुचित है। भाव यह कि सुरपति इन्द्रने दूरसे प्रकाश दीख पड़े, पहले कहा गया है कि हमारे देशमें गोचरभूमिकी इस हेतु सूर्यको द्युलोकमें रखा और स्वयं गायोंके संग प्रचुरता थी। इतना ही नहीं; अपितु राजवर्ग तथा प्रजावर्ग पर्वतकी ओर प्रस्थान किया। दूसरे शब्दोंमें — गायोंको दोनोंकी ओरसे गोचरभूमि छोड़ी जाती थी। पुण्यलाभकी चरनेके लिये पर्वतोंपर भेजना चाहिये। पर्वत भी गोचर-दृष्टिसे धर्मशाला, पाठशाला, कूप और तालाब आदि भूमिकी श्रेणीमें आते हैं। पर्वतका पर्याय गोत्र है, जिसका बनवानेकी प्रथाकी भाँति गोचरभूमि खरीदकर कृष्णार्पण एक अर्थ गायोंको त्राण देनेवाला भी होता है। पर्वतोंपर करनेकी उस युगमें प्रथा थी। आज भी वे गोचरभूमियाँ गौओंको पर्याप्त चारा और जल तो सुलभ रहता ही है, विद्यमान हैं और उनके दानपत्रोंमें स्पष्ट अंकित है-उन्हें शुद्ध वायु और व्यायामलाभ भी हो जाता है। 'इस गोचरभूमिको नष्ट करनेवाले यावच्चन्द्रदिवाकर पद्मपुराण, मनु, याज्ञवल्क्य तथा नारदादि स्मृतियोंमें नरकवास करेंगे।'

िभाग ९३ गाँवके निकट चारों ओर चार सौ हाथ यानी तीन सिर्फ हँकवा दे-बार फेंकनेसे लकडी जहाँ जाकर गिरे, वहाँतककी भूमि पथि क्षेत्रे परिवृते ग्रामान्तीयेऽथवा पुनः। और नगरके निकट चारों ओर इससे तिगुनी भूमि यानी स कालः शतदण्डार्ही विपालान् वारयेत्पशून्॥ बारह सौ हाथ भूमि गोचारणके लिये छोडनेका आदेश देते (मनुस्मृति ८। २४०) हुए मनुजी आगे कहते हैं कि यदि उतनी भूमिके अन्दरकी महर्षि याज्ञवल्क्यके वचनानुसार राह, ग्राम और किसी ऐसी कृषिको, जिसके चारों ओर बाड़ न लगे हों, गोचरभूमिके निकटके खेतको यदि रखवालेकी ग्रामके पशु नष्ट कर दें तो यह उनका अपराध नहीं और अज्ञातावस्थामें पशु नष्ट कर दें तो वह दोषी नहीं होगा। इसके लिये पशुरक्षकको राजदण्ड नहीं मिलना चाहिये— हाँ, यदि खेतको रखवाला जान-बूझकर चरा दे तो अपराधी है और चोरकी भाँति उसे दण्ड मिलना चाहिये— धनुश्शतं परीहारो ग्रामस्य स्यात् समन्ततः। शम्यापातास्त्रयो वापि त्रिगुणो नगरस्य तु॥ पथि ग्रामविवीतान्ते क्षेत्रे दोषो न विद्यते। तत्रापरिवृतं धान्यं विहंस्युः पशवो यदि। अकामतः कामचारे चौरवद्दण्डमर्हति॥ न तत्र प्रणयेद् दण्डं नृपतिः पशुरक्षिणाम्॥ (याज्ञवल्क्यस्मृति २।१६२) अन्तमें एक अत्यन्त रोचक और तथ्यपूर्ण प्रसंग (मनुस्मृति ८। २३७-२३८) उल्लेख्य है, जिससे गोचरभूमि हड़पनेवाले नराधमोंके महर्षि याज्ञवल्क्यका भी यही मत है। उन्होंने पर्वतकी तराईके गाँवोंके निकट आठ सौ हाथ तथा पापकी भयंकरतापर प्रकाश पड़ता है। एक बार एक नगरके निकट सोलह सौ हाथ गोचरभूमि छोड़नेकी चाण्डालकी पत्नी चिताग्निमें नर-कपाल रखकर उसमें व्यवस्था दी है। लिखा है— कौवेका मांस पकाया और उसको उसने कृत्तेके चमडेसे धनुश्शतं परीणाहो ग्रामे क्षेत्रान्तरं भवेत्। ढँक रखा था। एक व्यक्तिको यह देखकर स्वभावत: कौतृहल हुआ और उसने चाण्डालिनीसे पूछा—'तूने द्वे शते खर्वटस्य स्यान्नगरस्य चतुश्शतम्॥ ऐसी घृणित चीजको भी क्यों ढँक रखा है?' उसने (याज्ञवल्क्यस्मृति २।१६७) कितना मार्मिक उत्तर दिया था—'मैंने इसे इस भयसे ढँक यह भी आदेश है कि खेत गाँव तथा शहरसे दूर हों और खेतोंमें बाड घनी हो। बाडकी गहराई इतनी हो रखा है कि मेरा यह स्थान खेतोंके समीप है। यदि किसी कि कृषितक ऊँटकी दृष्टि भी न पहुँच सके और न कुत्ते, ऐसे महापापी व्यक्तिकी, जिसने गोचरभूमिको अपने सूअर आदि ही उसके छिद्रोंसे किसी प्रकार अन्दरकी खेतमें मिला लिया है, दृष्टि पड़ जायगी तो मेरा यह ओर प्रविष्ट हो सकें। 'नारदस्मृति' के अनुसार बाड न आहार ग्रहण करने लायक नहीं रह जायगा।' लगानेके कारण खेतीको यदि पशु चर जायँ या खेतमें नृकपाले तु चाण्डाली काकमांसं श्वचर्मणा। घुसें तो राजा पशुओंको दण्ड नहीं दे सकता, वह उन्हें चछाद गोचरक्षोणीकृषिकृद्दृष्टिभीतितः॥ हँकवा सकता है। बाड़ तोड़कर यदि पशु कृषिको नष्ट इस प्रकार हम देखते हैं कि गोचरभूमि छोड़ना महान् करें तो वे दण्डके अधिकारी होंगे। पुण्य और उसे नष्ट करना या हड़पना महापाप है। हमारे मनुका भी यह कथन है कि राहके निकट या देशमें गोवधकी भाँति गोचरभूमि भी एक समस्याके गाँवके पडोसके बाड लगे खेतोंमें यदि पशु किसी प्रकार रूपमें उपस्थित है। गोचरभूमिका हमारे यहाँ बडा पहुँचकर अनाज खा जायँ तो राजा पशुपालकपर सौ पण अभाव-सा है और उसकी बड़ी दुर्व्यवस्था है। इसके दपनात्राराडेलचित्रद्रितमञ्चित्रद्रितमञ्चित्रप्रकाराज्ञेलको त्रो असे हे तो असे प्रकार प्राप्त के प्रकार करें हि

वृन्दावनका श्रीराधारमणलाल मंदिर (डॉ० श्रीभागवतकृष्णजी नांगिया)

वृन्दावनका श्रीराधारमणलाल मंदिर



संख्या २]

श्रीराधारमणलालजी भक्तोंको नित्य नव उल्लास और आनन्द प्रदान करते हैं। श्रीराधारमणलालजी पहले शालग्रामरूपमें विराजमान

सप्त देवालयोंमेंसे एक है। षड्गोस्वामियोंमें अन्यतम श्रीपादगोपालभट्ट गोस्वामीद्वारा प्रकटित और सेवित

श्रीराधारमणलालजीका मन्दिर सुप्रसिद्ध गौड़ीय

थे। एक समय किसी भक्तने श्रीधाम वृन्दावनमें आकर समस्त श्रीविग्रहोंके लिये वस्त्र-अलंकार भेंट किये। श्रीपाद

गोपालभटुटजी मनमें विचारने लगे कि मेरे आराध्य भी यदि अन्य श्रीविग्रहोंकी भाँति होते तो मैं भी उन्हें इन

वस्त्रालंकारोंसे विभूषित करता। श्रीनृसिंहचतुर्दशीके दिन प्रह्लादके प्रेमके वशीभूत होकर प्रभु खम्भेसे प्रकट हो

सकते हैं तो क्या मेरा ऐसा सौभाग्य होगा कि प्रभु शालग्रामसे प्रकट हो जायँ। उन्होंने बहुत आर्त्त होकर विनय की। उस

दिनकी रात्रि व्यतीत होनेके पश्चात् वैशाख शुक्ला पूर्णिमाको प्रात:काल यह देखकर उनके आनन्दकी सीमा न रही कि

श्रीशालग्राम त्रिभंगललित, द्विभुज, मुरलीधर, मधुरमूर्ति

श्यामरूपमें आसनपर विराजमान हैं। संवत् १५९९की वह वैशाख शुक्ला पूर्णिमा व्रजमें

एक अपूर्व आनन्दोल्लास बिखेर रही थी। श्रीरूप-

श्रीगोपीनाथके समान तथा चरणयुगल श्रीमदनमोहनके समान हैं। अत: श्रीराधारमणलालजीके दर्शनकर दर्शनार्थियोंको एक ही श्रीविग्रहमें चारों श्रीविग्रहोंके दर्शन प्राप्त होते हैं।

सनातनादि गुरुजनोंके सान्निध्यमें महाभिषेक उत्सव हुआ और श्रीराधारमणलालजीने सबको आनन्द प्रदान किया। श्रीराधारमणजीका मुख श्रीगोविन्ददेवके समान, वक्ष:स्थल

भक्तिरत्नाकर ग्रन्थसे यह जाना जाता है कि श्रीपाद गोपालभट्ट गोस्वामीने श्रीचैतन्यमहाप्रभुकी सेवाका सौभाग्य प्राप्त किया था और प्रभुने यह आदेश दिया था कि

गोपाल! तुम श्रीवृन्दावन चले जाना, वहाँ श्रीरूप-सनातनके निकट रहकर भजन-साधनकर तुम्हें श्रीकृष्णकी प्राप्ति होगी। माता-पिताके देहावसानके बाद श्रीगोपालभट्ट

गोस्वामी सब कुछ परित्यागकर श्रीधाम वृन्दावन आ गये। वे कुछ दिन श्रीराधा-श्यामकुण्डके बीच केलिकदम्बके नीचे वास करनेके बाद 'जावट' ग्रामके पास किशोर्कुण्डपर

भजन-साधन करने लगे। महाप्रभुको जब यह पता चला तो प्रभुने अपनी डोर, कौपीन, बहिर्वास और एक आसन

इनके लिये प्रसादरूपमें भेजा: जो श्रीराधारमणमन्दिरमें

आज भी संरक्षित हैं और समय-समयपर उनके दर्शन

भी होते हैं। [श्रीहरिनाम]

साधनोपयोगी पत्र

जलमें दर्शन कराना, मारकर असुरोंका उद्धार करना आदि ऐश्वर्यमयी लीलाएँ हैं। इनका अनुकरण साधारण मनुष्यके

भगवानुकी सब लीलाओंका अनुकरण नहीं हो सकता प्रिय महोदय! सादर सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला। भगवान्की अवतार-लीलाओंके सम्बन्धमें

(१)

कुछ भी संदेह न करके ऐसा मानना चाहिये कि वे भगवान्

हैं, सर्वसमर्थ हैं, सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र हैं—चाहे जैसे, चाहे जो, चाहे जब कर सकते हैं; उनके लिये सभी कुछ ठीक है।

४४

पर हमें अनुकरण उन्हीं बातोंका करना चाहिये, जिनके लिये उनका तथा उनकी ही वाणीरूप शास्त्रोंका आदेश हो; और सच बात तो यह है कि भगवान्की सारी लीलाओंका

अनुकरण किया भी नहीं जा सकता। भगवानुकी लीलाएँ प्रधानतया तीन प्रकारकी होती

हैं-१. लोकसंग्रह या लोकशिक्षाके लिये की जानेवाली आदर्श लीला, २. अद्भुत, असम्भव जान पड्नेवाली

ऐश्वर्यमयी लीला और ३. अन्तरंग प्रेमी भक्तोंके साथ की जानेवाली प्रेममयी लीला। (१) माता-पिताकी भक्ति, गुरुकी भक्ति, ब्राह्मण-

भक्ति, सदाचार, देवपूजन, दीनरक्षण, इन्द्रियनिग्रह, ध्यान-पूजन, सत्य व्यवहार, निष्कामभाव, अनासक्ति, समत्व, नित्य आनन्दमें स्थिति आदि यथायोग्य अनुकरण करनेयोग्य

आदर्श लीलाएँ हैं। इनका अनुकरण अपने-अपने अधिकारके अनुसार किया जा सकता है और करना ही चाहिये।

भगवान्का आदेश भी है ऐसा करनेके लिये। (२) अग्नि पीना, वरुणलोकमें जाना, अँगुलीपर सात दिनोंतक पर्वत उठाये रखना, कई प्रकारसे अपने

विराट्रूपके दर्शन कराना, अघासुर-शिशुपाल आदिके मरनेपर उनकी आत्मज्योतिको अपनेमें विलीन कर लेना, हजारों-लाखों मनुष्योंके साथ विभिन्न भावोंसे एक ही साथ

मिलना, हजारों रानियोंके महलोंमें एक साथ रहना, दो जगह एक ही साथ एक ही समय आतिथ्य स्वीकार करना, सूर्यको ढक देना, असंख्य गोवत्स, गोपबालक तथा उनकी

(३) गोपियोंके घरोंसे माखन चुराकर खाना, चीरहरण, रासलीला और निकुंजलीला आदि अन्तरंग मधुर प्रेमलीलाएँ हैं, जिन्हें भगवान् अपने आत्मस्वरूप पार्षदोंके तथा

िभाग ९३

प्रेमियोंके साथ अनर्गल-अमर्यादरूपमें श्रुतिसेतुका भंग करके अपने-आपमें ही किया करते हैं-रेमे रमेशो व्रजसुन्दरीभिर्यथार्भकः स्वप्रतिबिम्बविभ्रमः॥ 'रमानाथ भगवान्ने व्रजसुन्दरियोंके साथ वैसे ही खेल किया, जैसे बालक अपनी छायाके साथ करता है।'

द्वारा सर्वथा असम्भव है।

इन मधुर लीलाओंका अनुकरण कदापि नहीं करना चाहिये। जो मृढ इनका अनुकरण करने जाता है, वह शास्त्र और धर्मसे च्युत होकर घोर नरकका अधिकारी होता है! वस्तुत: इन तीनों प्रकारकी लीलाओंमें केवल पहली लीला ही अनुकरणके योग्य होती है। पिछले दोनों

प्रकारकी लीलाएँ तो श्रवण, कीर्तन, मनन और ध्यान करके भगवान्के प्रति भक्ति तथा प्रेम प्राप्त करनेके लिये हैं। शुद्ध मनसे श्रद्धा-भक्तिपूर्वक भगवान्की ऐश्वर्य और माधुर्यसे भरी लीलाओंका चिन्तन करना चाहिये और आदर्श लोकशिक्षामयी लीलाओंको अपने जीवनमें उतारना

(२) गोपीहृदयमें प्रेम-समुद्र

चाहिये। शेष भगवत्कृपा।

सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला। वास्तवमें ये गोपरमणियाँ प्रेम-जगत्की तो परम आदर्श हैं ही, नारी-

भगवत्-राज्यमें भी किसी भी नारीके चरित्रमें नारी-जीवनकी महिमामयी सेवाकी ऐसी आदर्श मनोहर सहज मृर्तिका विकास नहीं हुआ। सावित्री, अरुन्धती, लोपामुद्रा, उमा, रमा—िकसीकी उपमा श्रीगोपांगनाओंके साथ नहीं दी

जगत्में भी इनकी कहीं तुलना नहीं है। विश्व तो क्या,

जा सकती। आत्मसुख-लालसाकी गन्धसे रहित होकर केवल अपने प्रियतम श्रीकृष्णको सुखी करनेके लिये ही प्रत्येक वस्तुके रूपमें स्वयं बन जाना, ब्रह्माजीको सबमें जीवन धारण करना, लोक-परलोक, भोग-मोक्ष—सब भगवत्स्वरूपके तथा महान् ऐश्वर्यके दर्शन कराना, अक्रूरको

साधनोपयोगी पत्र संख्या २] केवल श्रीभगवान्के कण्ठका ही भूषण है, वह दूसरी जगह कुछ भूलकर प्रियतमकी रुचिके अनुसार अपने जीवनकी क्षण-क्षणकी समस्त क्रियाओंका सहज सम्पादन करना ही कहीं भी नहीं मिलती। इसी प्रकार श्रीगोपांगनाकी प्रीति भी गोपी-प्रेम है। श्रीकृष्णकी मधुर लीलास्थली व्रजके सिवा अन्यत्र कहीं श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं, उनमें किसी भी वासना-नहीं मिलती। ऐसा प्रेम श्रीगोपांगना ही जानती है, कर सकती है और यह प्रेम इस प्रेमके एकमात्र पात्र कामनाका पृथक् अस्तित्व नहीं है; पर वे परम प्रेमास्पद भगवान् श्रीगोपांगनाओंके प्रेम-सुखका आस्वादन करने-श्रीव्रजेन्द्रनन्दन श्यामसुन्दर मुरलीमनोहर गोपीवल्लभ श्रीकृष्णके करानेके लिये अपने भगवत्स्वरूप मनमें नित्य नयी-नयी प्रति ही हो सकता है। इस दिव्य प्रेम-सुधा-रसका अनन्त विचित्र वासनाओंका उदय करते हैं और भगवान्की उन अगाध समुद्र नित्य-नित्य लहराता रहता है-गोपीहृदयमें। प्रतिक्षण उदय होनेवाली नित्य-नवीन वासनाओंके अनुकूल इसीसे वह अनुपमेय, अतुलनीय और अप्रमेय है। अपनेको निर्माण करके भगवान्को सुख पहुँचाना केवल श्रीगोपांगनाओंके ही शक्ति-सामर्थ्यसे सम्भव है। बस, श्रीराधा-प्रेमका स्वरूप प्रियतमकी रुचिको—चाहको पूर्ण करना ही जिनके जीवनका प्रिय महोदय, सादर प्रणाम। आपने श्रीराधाके प्रेमका स्वरूप है, जिनकी प्रत्येक स्फुरणामें, प्रत्येक संकल्पमें, स्वरूप पूछा सो इसका उत्तर मैं प्रेमशून्य जन्तु क्या दूँ, प्रत्येक चेष्टामें, प्रत्येक शब्दमें और प्रत्येक क्रियामें केवल यद्यपि मैं 'राधा' पर बोलने-लिखनेका दुस्साहस सदा करता रहता हूँ। मुझे इसमें सुख मिलता है। इसीसे ऐसा प्रेमास्पद श्रीकृष्णकी दिव्य प्रेमजनित वासनापूर्तिका ही सहज सफल प्रयास है, उन श्रीगोपांगनाओंकी तुलना कहीं, करता हूँ। राधा या राधा-प्रेम-तत्त्वका विवेचन मेरी शक्तिसे किसीसे भी नहीं हो सकती। श्रीगोपांगनाओं में मधुरभावकी परेकी चीज है। पर सदा लिखता हूँ—इसलिये आपको भी पूर्ण अभिव्यक्ति है। इस मधुरभावसे ही मधुर रसका दो-चार शब्द लिख ही देता हैं। श्रीराधाका प्रेम अचिन्त्य और अनिर्वचनीय है। प्राकट्य होता है। एक महात्माने बताया है कि यह मधुर उसका वर्णन न श्रीराधा कर सकती हैं, न श्रीमाधव ही रस तीन प्रकारका होता है। तीनों ही अत्यन्त मूल्यवान् हैं, पर एककी अपेक्षा दूसरा अधिक उत्कृष्ट और मूल्यवान् करनेमें समर्थ हैं। कहनेके लिये इतना ही कहा जाता है है। जैसे मणियाँ तीन प्रकारकी होती हैं—साधारण मणि, कि वह प्रेम परम विशुद्ध तथा परम उज्ज्वल है। स्वर्णको बार-बार अग्निमें जलानेपर जैसे उसमें मिली हुई दूसरी चिन्तामणि और कौस्तुभमणि। साधारण मणिका जैसा साधारण मूल्य होता है, वैसे ही श्रीकृष्णके प्रति कुब्जाकी धातु या दूसरी चीजें जल जाती हैं और वह स्वर्ण जैसे प्रीतिका मूल्य साधारण है। श्रीकृष्ण-सम्पर्कसे महाभागा अत्यन्त विशुद्ध और उज्ज्वल हो जाता है, वैसे ही राधाका प्रेम केवल विशुद्ध प्रेम है। पर वह स्वर्णकी भाँति जलानेपर होनेपर भी उसमें श्रीकृष्णकी सेवा करके केवल अपनेको ही सुख पहुँचानेका संधान था। इसीसे उसे 'दुर्भगा' कहा विशुद्ध नहीं हुआ है, वह तो सहज ही, स्वरूपत: ही ऐसा गया। चिन्तामणि जहाँ-तहाँ सहजमें नहीं मिलती। उसका है। सिच्चदानन्दमयमें दूसरी धातु आती ही कहाँसे ? यह मूल्य भी बहुत अधिक है। सब लोग उतना मूल्य दे ही तो साधकोंके लिये बतलाया गया है कि श्रीकृष्ण-प्रेमकी नहीं सकते। वैसे ही श्रीकृष्णकी पटरानियोंकी दिव्य प्रीति साधनामें परिपक्व व्रजरसके साधकके हृदयसे दूसरे राग है। श्रीकृष्णका भी सुख और अपना भी सुख—उनमें इस और दूसरे काम सर्वथा जल जाते हैं और उनका प्रेम प्रकारका उभय-सुखी भाव बना रहता है; इसलिये उनकी एकान्त परिशुद्ध हो जाता है। श्रीराधामें यह दिव्य प्रेम सहज इस रतिका नाम 'समंजसा' है। श्रीगोपांगनाका प्रेम साक्षात् और परमोच्च शिखरपर आरूढ़ है। इसी राधाप्रेमका दूसरा कौस्तुभमणिके सदृश है। चिन्तामणि तो दस-बीस भी नाम अधिरूढ महाभाव है। इसमें केवल 'प्रियतम-सुख' मिल सकती हैं, पर कौस्तुभमणि तो एक ही है और वह ही सब कुछ है। शेष भगवत्कृपा।

व्रतोत्सव-पर्व

कल्याण

सं० २०७५, शक १९४१, सन् २०१९, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, चैत्र कृष्णपक्ष तिथि दिनांक नक्षत्र तुलाराशि रात्रिमें १२।८ बजेसे, शक संवत् १९४१ प्रारम्भ। द्वितीया रात्रिमें ३। १० बजेतक शुक्र हस्त दिनमें १२। ३६ बजेतक २२ मार्च भद्रा दिन में २।२५ बजेसे रात्रिमें १।४१ बजेतक। तृतीया 😗 १।४१ बजेतक | शनि | चित्रा 😗 ११। ३९ बजेतक २३ ,,

स्वाती 🕠 ११। ० बजेतक

चतुर्थी " १२।३६ बजेतक रिव

षष्ठी 🦶 ११।५१ बजेतक मंगल

सप्तमी '' १२।१५ बजेतक बुध अष्टमी ᢊ १।१० बजेतक गुरु मुल 🕖 १। ३ बजेतक

शुक्र शनि

नवमी " २।३१ बजेतक पु०षा० 🕖 २ । ४५ बजेतक दशमी रात्रिशेष ४।१७ बजेतक

एकादशी अहोरात्र रवि

उ०षा० सायं ४।५५ बजेतक श्रवण रात्रिमें ७। २० बजेतक धनिष्ठा 🗤 ९।५६ बजेतक

पु० भा० 🗤 २ । ५९ बजेतक

त्रयोदशी " १०।२५ बजेतक बुध उ०भा० रात्रिशेष ५ ।७ बजेतक

चतुर्दशी " १२। १२ बजेतक । गुरु शुक्र रिवती अहोरात्र अमावस्या १। ३८ बजेतक

तिथि वार नक्षत्र

शनि

रवि

सोम

मंगल

ब्ध

गुरु

शुक्र

शनि

रवि

सोम

बुध

गुरु

ullinduism alischia berver bites: didac

प्रतिपदा दिनमें २।३६ बजेतक

द्वितीया 🔈 ३ ।६ बजेतक

तृतीया 🕖 ३।३ बजेतक

चतुर्थी 😗 २ । ३० बजेतक

पंचमी 😗 १। ३० बजेतक

षष्ठी " १२।३ बजेतक

सप्तमी 🗤 १०। १७ बजेतक

अष्टमी <table-cell-rows> ८। १६ बजेतक

नवमी प्रात: ६ ।० बजेतक

एकादशी रात्रिमें १ ।९ बजेतक

द्वादशी '' १०। ४६ बजेतक

त्रयोदशी 🥠 ८। २८ बजेतक

चतुर्दशी सायं ६।२१ बजेतक

सं० २०७५, शक १९४१, सन् २०१९, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, चैत्र शुक्लपक्ष

रेवती प्रात: ६।४८ बजेतक

अश्विनी 🗤 ८। ४ बजेतक

भरणी दिनमें ८। ४९ बजेतक

कृत्तिका 🗤 ९।४ बजेतक

रोहिणी 🗤 ८।४९ बजेतक

मृगशिरा 🗤 ८। १० बजेतक

आर्द्रा प्रात: ६।० बजेतक

पुनर्वसु 🕠 ५।५६ बजेतक

आश्लेषा रात्रिमें २।५० बजेतक

उ०फा० " ९।५९ बजेतक

हस्त 🕠 ८। ३९ बजेतक

मघा 😗 १। ९ बजेतक

मिंगल पु०फा० '' ११।३१ बजेतक

द्वादशी दिनमें ८।२३ बजेतक मिंगल शतिभषा 🔑 १२।३२ बजेतक

एकादशी प्रात: ६ ।१६ बजेतक सोम

अनुराधा 🕖 ११। २ बजेतक ज्येष्ठा 🗤 ११। ४८ बजेतक

पंचमी '' ११।५८ बजेतक सोम | विशाखा '' १०।४६ बजेतक

रंगपंचमी। २५ ,, २६ "

30 ,,

३१ ,,

१ अप्रैल

3 ,,

दिनांक

६ अप्रैल

૭

9

१० "

११ "

१२ "

१३ "

28 "

१५ "

१६ "

१७ "

26 11

,,

,,

28 "

भद्रा रात्रिमें ११।५१ बजेसे, मूल दिनमें ११।२ बजेसे। २७ ,,

भद्रा दिनमें १२।४ बजेतक, धनुराशि दिनमें ११।४८ बजेसे। 76 "

२९ ,,

मुल दिनमें १।३ बजेतक।

मकरराशि रात्रिमें ९।१८ बजेसे।

भौमप्रदोषव्रत।

अमावस्या

५३ बजेसे।

श्रीस्कन्दषष्ठीव्रत।

रात्रिमें ८। २२ बजेसे।

पंचक समाप्त प्रात: ६।४८ बजे।

कन्याराशि रात्रिशेष ५।८ बजेसे।

प्रदोषव्रत, श्रीमहावीर-जयन्ती।

मुल प्रातः ८।४ बजेतक।

रात्रिमें ९।४२ बजे।

भद्रा दिनमें ३। २४ बजेसे रात्रिशेष ४। १७ बजेतक।

रेवतीका सूर्य रात्रिमें २।५४ बजे। कुम्भराशि दिनमें ८। ३८ बजेसे, पापमोचनी एकादशीव्रत (सबका), **पंचकारम्भ** दिनमें ८। ३८ बजे।

श्राद्धादिकी अमावस्या, मूल रात्रिशेष ५।७ बजेसे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

वृश्चिकराशि रात्रिशेष ४।५० बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय

भद्रा दिनमें १०। २५ बजेसे रात्रिमें ११। १९ बजेतक, मीनराशि

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

मेषराशि प्रात: ६।४८ बजेसे, चैत्र नवरात्रारम्भ, 'परिधावी' संवत्सर,

मत्स्यावतार, गणगौर, भद्रा रात्रिमें २।४७ बजेसे, वृषराशि दिनमें २।

भद्रा दिनमें २।३० बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।

मिथ्नराशि रात्रिमें ८।३० बजेसे।

भद्रा दिनमें २।२२ बजेसे रात्रिमें १।९ बजेतक, कामदा एकादशीव्रत (सबका), **मृल** रात्रिमें १।९ बजेतक।

भद्रा सायं ६। २१ बजेसे रात्रिशेष ५। २६ बजेतक, व्रत-पूर्णिमा।

gg/dharman la MADE AVITHIL ARVERAY ANYOPASH/Sh

भद्रा दिनमें १०।१७ बजेसे रात्रिमें ९।१७ बजेतक। श्रीदुर्गाष्टमीवृत, श्रीदुर्गानवमीवृत, मूल रात्रिशेष ४। २७ बजेसे। सिंहराशि रात्रिमें २।५० बजेसे, मेष-संक्रान्ति दिनमें ४।१५ बजे। संख्या २] कृपानुभूति कृपानुभूति (१) एक दिन सन्त कुटिया बन्द करके भजन कर रहे थे, तभी श्रीराधारमणबिहारीजीके कृपाकटाक्षकी आवाज आयी—'दरवाजा खोलो'। आपने समझा कि कोई दिव्य अनुभूति ग्वाला होगा। जब तीन बार यही स्वर सुनाई दिया तब श्रीराधामाधवकी प्रत्यक्ष अनुकम्पाको प्रकट करनेवाली आप बोले, कौन है ? आवाज आयी—' जिसका तुम भजन २०१५ की एक विलक्षण घटना मथुराके निकट लगभग कर रहे हो।' तब सन्तने कहा—' भगवन्! यदि आप वही हैं, तब आपके लिये तो सब द्वार खुले ही हैं।' ऐसा कहते १५ कि॰मी॰ दूर 'महावन' कस्बेकी है। जिसे 'प्राचीन ही द्वार स्वतः खुल गया और श्रीवृषभानुनन्दिनीके साथ गोकुल के नामसे भी जाना जाता है। भगवान् श्रीकृष्णके जन्मके बाद वसुदेवजी यमुना पारकर यहीं लाये थे। इसके श्रीकृष्ण प्रकट हो गये। सामने ही कोयला गाँव है, जहाँ वसुदेवजीने 'कोई लेऊ, उन सन्तका नाम था स्वामी ज्ञानदास। आज भी कोई लेऊ, 'ऐसा कहा था। इसीलिये इसका नाम कोयला उनका महावनमें रमणरेतीधामके नामसे कार्ष्णि उदासीन आश्रम स्थापित है। कालान्तरमें स्वामी ज्ञानदासके अन्तरंग पड़ गया; ऐसी अनुश्रुति है। इसी महावन कस्बेके लिये; जो कि अपना शिष्योंको भी उस भगवद्रपके दर्शनकी इच्छा हुई। तब ऐतिहासिक, पौराणिक एवं धार्मिक महत्त्व रखता है एवं आप कुछ महात्माओंके साथ जयपुर गये किंतु कोई मूर्ति जो व्रजभूमिके बारह वनोंमेंसे एक है, कहा गया है— समझमें नहीं आयी, तब मूर्तिकारने कहा कि हम आपको मोम दे देते हैं, आप बनाकर दे दीजिये। स्वामी ज्ञानदासजीने वनानि द्वादशान्याहुर्यामुनोत्तरदक्षिणे। ऐसा ही किया। ठाकुर श्रीराधारमणविहारीलालजीकी मूर्ति महावनं महाश्रेष्ठं कामं काम्यवनं तथा॥ बन गयी। उसकी प्राणप्रतिष्ठा इसी आश्रममें हुई, जो आज (पद्मपुराण) मथुरानिकटे भी दर्शकोंको बलात् अपनी ओर आकर्षित करती है। इसी वृन्दावनसमीपे शभे। च विग्रहसे सम्बन्धित घटना यहाँ प्रस्तृत है— सैकते श्रीमहावनपार्श्वे रमणस्थले ॥ च वर्ष २०१५ में इस आश्रममें सहस्रचण्डी महायज्ञ (गर्गसंहिता) इस स्थानकी ऐसी दिव्यताका अवलोकनकर ही शायद हुआ। उसमें आयोजकोंके परिवारीजन भी सम्मिलित थे। आजसे लगभग दो सौ वर्ष पूर्व एक परम वीतरागी तेजस्वी उसी परिवारकी एक माँ और उसकी नौ सालकी बेटी भी संतका आगमन हुआ। उन्होंने इस स्थानकी पावनता एवं प्रारम्भसे समापन तक उपस्थित रही। नित्य दुर्गासप्तशतीका भगवान्की क्रीडास्थलीका अनुभव करते हुए यहीं तपस्या पाठ और सायंकाल हवन होता था। इसके अतिरिक्त ठाकुर करनेका विचार बनाया। वे ऊँचे-ऊँचे रेतके टीलों तथा श्रीराधारमणविहारीलालजीकी मंगला, शृंगार, भोग आरती नागफनीसे घिरे जंगलके बीच छोटी-सी कृटिया बनाकर एवं शयनदर्शन भी होते। माँ, बेटी दोनों नियमसे यह सब रहने लगे। भगवद्भक्तिमें लीन रहते हुए उन्होंने बारह वर्ष करती थीं। बेटी छोटी थी फिर भी उसे ठाकुरके प्रति तक एक मुट्ठी चना खाकर जीवनयापन किया। मनमें अत्यन्त अनुराग हो गया। कार्यक्रमके समापनके उपरान्त एक ही इच्छा थी—श्रीराधारमणबिहारीका साक्षात् दर्शन। घर जाकर भी उसके हृदयसे श्रीरमणबिहारीकी छवि दूर ठाकुरजीने इनकी इस व्यवस्थाको किसी वैश्यसे स्वप्नमें नहीं हुई। किसी-न-किसी रूप उन्हें याद करना उसकी कहा, तब वह इनके पास आया और चनेकी व्यवस्था दिनचर्या बन गयी। की। आप दिनमें एक बार ठाकुरजीका भोग लगाकर ही एक महीने बाद वही लड़की स्कूलसे घर आते समय चना ग्रहण करते और जल पीकर निरन्तर जपमें लगे रहते। अचानक बेहोश हो गयी। मुँहसे झाग आने लगा। किसीको उन्हें यह विश्वास था कि ठाकुरजी अवश्य दर्शन देंगे। कुछ समझमें नहीं आ रहा था कि अचानक यह क्या

भाग ९३ कल्याण ********************** हुआ। घरवाले सबकुछ श्रीराधारमणविहारीजीपर छोड़ थी। माँ बडी परेशान रहती कि क्या करूँ, कैसे इसे नींद आये। उसे एक युक्ति सूझी कि आश्रममें शयनदर्शनके डॉक्टरके पास ले गये। डॉक्टर कुछ भी नहीं समझ पाया कि बीमारी क्या है। उसने लडकीको दिल्ली ले जानेकी समय ठाकुर श्रीराधारमणबिहारीलालजीको सुलानेके समय सलाह दी। लडकीको दिल्ली ले जाया गया। दो तीन जो पद गाया जाता है, वह गाकर सुनाऊँ, शायद नींद जगह दिखाया गया परंतु कोई सन्तोषजनक परिणाम नहीं आ जाय। यहाँ हम उस पदका उल्लेख कर रहे हैं— निकला। लडकी होशमें तो आ गयी पर सामान्य स्थितिमें नैनोंमें नींद भर आयी रमणबिहारीजीके॥ नहीं थी। दिल्लीकी एक अच्छी महिला डॉक्टरकी सलाहपर कौन बिहारीजीको दूध पिलावे, कौन खवावे मलाई। १२ घण्टे मस्तिष्ककी स्क्रीनिंग हुई। उसकी रिपोर्ट देखकर रमणबिहारीजीके॥ डॉक्टर स्वयं अचम्भेमें पड गयी कि मैं इसका क्या इलाज सिखयाँ बिहारीजीको दूध पिलावें, श्रीराधे जू खवावें मलाई। करूँ, कोई बीमारी तो है ही नहीं। मैं वहाँ स्वयं उपस्थित रमणबिहारीजीके॥ था। डॉक्टरसे कुछ मार्गनिर्देशन लेकर सब अपने घर आ गये। कौन बिहारीजीकी सेज बिछावे कौन करे गुणगाई। बीमारी कोई है नहीं, लड़की स्वस्थ भी नहीं है, तब रमणबिहारीजीके॥ क्या किया जाय। भैंने उनके मनकी तसल्लीके लिये अपने सखियाँ बिहारीजीकी सेज बिछावें श्रीराधेजू करें गुणगाई। परिचित होम्योपैथीके डॉक्टरसे दवा प्रारम्भ करा दी। रमणबिहारीजीके॥ लड़कीकी माँको अब एक प्रेरणा हुई कि क्यों न 'चन्द्रसखी' भज बालकृष्णछवि, चरणकमल सिर नाई। बेटीको रमणबिहारीकी याद दिलायी जाय। इस घटनाके रमणबिहारीजीके॥ बाद जो हुआ, वह विस्मयकारक है। लड़कीको इस पदको पूरा सुनाते ही लड़कीको गहरी नींद आ जाती। ठाकुर श्रीराधारमणबिहारीजीकी कृपासे कुछ रमणविहारीकी स्मृति दिलाते ही अद्भृत घटना हुई। जो लडको कुछ भी नहीं समझ रही थी, वह रमणविहारीजीका समय उपरान्त लड़की पूर्ण स्वस्थ और सामान्य हो नाम लेते ही सचेत हो गयी। माँने कहा—'बेटा तू, गयी। - कार्ष्णि डॉ० श्रीराधेश्यामजी अग्रवाल ठाकुरजीको याद कर, वे ही तुझे ठीक करेंगे।' जब भी (२) लड़कीको कोई कष्ट होता तो वह श्रीराधारमणजीका गोवर्धन-परिक्रमाक्षेत्रमें प्रभु श्रीकृष्णकी उपस्थिति स्मरण करती और उसे आराम मिलने लगता। स्थिति यहाँ तक हो गयी कि ठाकुरजी लड़कीके बात सन् १९७९ ई० की है। मेरे नानाजी जो कि लगभग ७२ वर्षके थे, मथुरामें मंडी रामदासमें स्थित अपने याद करनेपर उसकी परिचर्यामें उपस्थित रहने लगे। इसका अनुभव देखनेवालोंने भी किया। रात्रिको लड़की जब सोती औषधालयमें बैठे गीताका 'नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति' श्लोक तो वह इस तरह सोती जैसे उसकी बगलमें कोई लेटा है। समझा रहे थे कि दो २७-२८ वर्षके युवक आये और एक बार लड़कीके सिरमें तीव्र खुजली मची, जो बहुत बोले—डॉक्टर साहब! राम-राम! नानाजीने आशीर्वाद देते प्रयासोंके बाद भी ठीक नहीं हुई। तब माँका ध्यान आया हुए कहा—'लाला! कहीं कू जाय रहे हो?' हाँ, डॉक्टर कि ठाकुरजीको क्यों न कहा जाय। माँने कहा—'बेटा! साहब, गोरधनकी परकम्मा कू जाय रहे, सोची डॉक्टर साहबसे मिलते भये निकलेंगे। नानाजी बोले—'बड़ी किरपा अपने ठाकुरजीसे कह, वे ही तेरी खुजली ठीक करेंगे।' इतना कहना था कि लड़की खुश हो गयी। कुछ देर बाद करी बेटा! मेरे सवा रुपया दानघाटीमन्दिरमें चढाये दियो।' बोली—'बड़े सुन्दर लग रहे हो।'तब मॉॅंने पूछा—'किससे और बोले—'लाला, नेक धीरे-धीरे चलो तो मैं भी चल पड़ँ।' कह रही है।' लड़की बोली—' ठाकुरजीने मेरा सिर खुजलाया युवक तुरन्त बोले—'नाय-नाय डॉक्टर साहब, गोरधनकी है, अब मेरी खुजली ठीक हो गयी।' परकम्मा लम्बी हते, डोकरा-डोकरीके बसकी नाय, आप लड़कीको प्राय: बीमारीके कारण नींद नहीं आती यहीं भजन करो, हमें क्षमा करो।' और कुछ कहा जाय,

संख्या २] कृपा	नुभूति ४९
************************	*************************************
वे इससे पहले ही चल दिये।	थोड़ी देर विश्रामके बाद नानाजी बोले—७० वर्षसे
मैं अपने नानाजीको डोकरा—बूढ़ा कहे जानेसे गुस्सेमें	अधिकका हो गया हूँ। लगभग दस वर्ष और शरीर चलेगा,
था। साथ ही, अपने ज्ञानी नानाजीको मूरख युवकोंके लिये	अत: तुम्हें एक गोपनीय घटना बताता हूँ, ताकि हमारे वंशमें
हाथ जोड़नेसे दुखी भी था। मैंने नानाजीसे कहा—' गोवर्धनकी	विश्वास रहे। ध्यानपूर्वक हृदयमें धारण करो। आजसे तीस
परिक्रमामें ऐसा क्या है, जो आप इन युवकोंके आगे	वर्ष पूर्व यहाँसे थोड़ा आगे हलका वन था और कच्चा रास्ता
गिड़गिड़ा रहे थे?' वे बोले—'बेटा, सात वर्षकी आयु से	था। बरसातमें यहाँ पानी और दलदल हो जाता था। एक
अपने दादाके साथ परिक्रमा प्रारम्भ की थी, अब शरीर	पूर्णमासीको मैं परिक्रमा करने आया तो गाँवके लोग बोले—
शिथिल हो गया है, वरना हर पूर्णिमापर गोवर्धन-परिक्रमा	मौसम खराब है और आनौरके आगे दलदल है, परिक्रमा
लगाता था।' मैं आपको ले चलता हूँ, मैंने जोशसे कहा।	सुबह लगा लो, पर मैं दूकान बन्द करनेसे बचनेके लिये रात्रिमें
मेरा इतना कहना था कि नानाजीने दवाखाना बन्द कर दिया	ही परिक्रमा प्रारम्भ कर बैठा। कुछ ही देरमें बादल हो गये
और अपनी छड़ी उठाकर चलनेके लिये तत्पर हो गये। यह	और पूर्णिमाका चन्द्रमा छुप गया। अन्धकार हो गया। मैं फिर
उत्साह देख मैं चिकत था।	भी दृढ़ निश्चयके साथ चलता रहा। मनमें एक अलग ही
हमलोग बसद्वारा गोवर्धन पहुँच गये। नानाजीने मानसी	आनन्द था, दूरतक मेरे अलावा कोई नहीं था।
गंगामें स्नानकर सन्ध्या की एवं राधा-कृष्णके प्रेमके निमित्त	धीरे-धीरे भूमि नरम होने लगी। मैंने अपने अनुभवसे
परिक्रमाका संकल्प लिया। मुझे भी कराया और परिक्रमा	मार्ग थोड़ा बदला। धीरे-धीरे पानी घुटनोंतक हो गया। मैंने
प्रारम्भ की। मैं अपनी जिज्ञासाके कारण प्रश्न-पर-प्रश्न	अगला कदम रखा तो पूरा अन्दर चला गया। पीछे आनेकी
झोंके जा रहा था। अचानक नानाजीने क्रोध करते हुए	कोशिश की तो पैर कीचड़से नहीं निकल रहा था। कुछ
कहा—' मूरख लड़के ! तुझे परिक्रमा लगानेकी अक्ल नहीं	समझूँ, तबतक कमरसे नीचेका भाग डूब चुका था।शेष भी
है।' मैं भी गुस्सेसे बोला, 'जैसे सब चलते हैं, वैसे मैं भी	धीरे-धीरे अन्दर जा रहा था। मैंने एक हाथ पानीमें डाला तो
चल रहा हूँ।'	वह भी फँस गया। अब मैं समझ गया कि लोग ठीक कह
बोले—'चलना तो शरीरका तप है, मनका क्या कर	रहे थे। अन्तिम समय नजदीक जानकर मैं जोर-जोरसे
रहे हो? बकवाससे मन तो कोरा रह जायगा।' 'क्या	'श्रीराधाकृष्ण के गह चरण, श्रीगिरिवरधरण की ले
करूँ ?'—मैंने कहा। 'तो तुम्हें परिक्रमा करनेका सही	<i>शरण '</i> का जप करने लगा। बीच-बीचमें 'हे गोपाल, हे
तरीका नहीं मालूम' वे बोले। मैंने कहा 'आपने कभी	वंशीलाल, अपने चरणोंमें स्थान देना 'का आर्तनाद भी कर
बताया।' वे गुस्सेसे बोले—'मुझसे भूल हुई' कहकर	रहा था।
उन्होंने एक कागज मुझे दिया।	अचानक वहाँ एक बालकण्ठकी आवाज आयी—
'श्रीराधाकृष्ण के गह चरण, श्रीगिरिवरधरण की ले शरण।'	'को है' (कौन है ?) मैं तत्काल जोरसे चिल्लाया—'बेटा!
बहुत पुराने कागजपर यह पंक्ति लिखी थी। नानाजीने	मैं एक परिक्रमाका यात्री हूँ, कल कोई पूछे तो बताना कि
बताया यह लिखायी उनके दादाजीकी है और बोले—' इस	डॉक्टर साहब दलदलमें लीन है गयै। लाला तेरी बड़ी कृपा
मन्त्रका जप करते रहो, कभी प्रभुकी कृपा हो गयी तो तर	होगी, नहीं तो परिवारवाले परेशान होंगे।' अरे! अभी तो
जाओगे।' मैं फिर बोला—' आपपर हुई है क्या ?' नानाजीने	तोये बहुत डाक्टरी करनी है, लै मेरी लकुटिया पकड़ और
कहा—' ये बातें बतायी नहीं जातीं।' मैंने कहा—'आप भी	बाहर निकल—बालक बोला। 'नाय-नाय लाला, मेरे बोझसे
नहीं बतायेंगे तो कौन बतायेंगे ?''विचार करूँगा'नानाजीने	अगर तू भी दलदलमें फँस गयो तो मोकूँ बड़ो ही पाप
कहा—अब तुम जप के साथ परिक्रमा करो।	लगैगो, तूने अभी पूरी जिन्दगी बितानी हते है।' मैंने अपना
हम धीरे–धीरे आनौरकी ओर पहुँचे। नानाजी एक	ज्ञान दिखाया—नानाजी बोले।
मन्दिरके बाहर विश्रामके लिये बैठ गये।	मेरी चिन्ता छोड़ लकुटिया पकड़, मोये देर है रही

है, मय्या मारेगी—बच्चेकी आवाजमें कुछ था। उसकी

चलते-चलते बोले। अब ठीक मारग आय गयो है। अपना

लाठी पकडी, और मैं एक तिनकेकी तरह बाहर आ गया। जप कर और परकम्मा लगा, मैं चला—बालककी आवाज 'लाला इतनी रातमें बाहर नाय निकलें, खतरा रेवै', आयी। ठीक है बेटा, सुखी रह और अपनी मय्या कू मेरी

नानाजी बालकको समझा रहे थे—'तेरी मय्या तोहे लाडमें राम-राम कहियो, कहते-कहते नानाजी बालककी ओर पीछे मुड़े, वे चिकत थे।मार्ग सुनसान था।अब नानाजीका ये बाँसुरी और मोरपंखी लगाय दई है, पर यासे कोई कृष्ण

थोड़े ही बन जाय है, चल मैं तोकूँ तेरे घर पहुँचा आऊँ।' विवेक जाग्रत् हुआ, स्वयं प्रभु आये थे। फिरसे पुकारा काफी समय उस स्थानपर बैठकर जप किया, रजमें लोट मेरी चिन्ता छोड, तोकुँ या दगरे (मार्ग) से पार कराय दुँ फिर जाऊँगा—बालक बोला। 'अरे! तू तो बड़ा ही हठी लगायी, अपनी मूर्खतापर रोये अपने भाग्यपर हँसे, ऐसा

बालक है, का करै है ?' यहीं गोवर्धन पर्वतमें डोलूँ और नानाजीने बताया। पर नानाजी भगवान्ने आपको इतने संकेत दिये, फिर भी आप नहीं समझे—मैंने पूछा। नानाजीने गय्या चराऊँ, कभी तेरे-से मूरखनकी मदद करूँ—बालकने हँसते-हँसते कहा। लाला! तेरी मय्या बड़ी भागवान है, जो बताया, प्रभुके सामने बुद्धि साथ नहीं देती।

कलयुगमें ऐसो बेटा पाया है। तेरे परिवारमें गिर्राज बाबाकी अगर मेरा अनुभव भी आप-जैसा हो गया तो मैं तो बड़ी कृपा है। नानाजीने आशीष दी। बाबरे तो पे कृपा नाय यहीं घर बना लूँगा—मैंने कहा। नानाजी बोले—बेटे! जब का ? बालक बोला। लाला हमारी किस्मत कहाँ ? अब देख मन निर्मल होगा तो कुछ नहीं करना होगा, आओ, अब

श्रीराधा-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्-

```
ईश्वर उवाच
```

परिक्रमा-जैसे शुभ काममें दलदलमें फँस गयो हतो, नानाजी

सम्प्रवक्ष्यामि नाम्नामष्टोत्तरं शतम्। यस्य सङ्कीर्तनादेव श्रीकृष्णं वशयेद् ध्रुवम्॥ १॥ अथास्या:

गोपी कृष्णसङ्गमकारिणी। चञ्चलाक्षी कुरङ्गाक्षी गान्धर्वी वृषभानुजा॥ २॥ सुन्दरी राधिका स्मितमुखी रक्ताशोकलतालया । गोवर्धनचरी वीणापाणिः

दर्पणास्या कलावती। कृपावती सुप्रतीका तरुणी हृदयङ्गमा॥ ४॥ चन्द्रावलीसपत्नी च विपरीतरितप्रिया। प्रवीणा सुरतप्रीता चन्द्रास्या चारुविग्रहा॥ ५ ॥

कृष्णप्रिया कृष्णसखी केकराक्षी हरेः कान्ता महालक्ष्मी सुकेलिनी। सङ्केतवटसंस्थाना कमनीया च कामिनी॥ ६॥

किशोरी वृषभानुसृता राधा केशिनी केशवसखी

वृषभानुपुरावासा

मरालगमना

अष्टादशाक्षरफला

सुस्तनी मधुरास्या च बिम्बोष्ठी पञ्चमस्वरा। सङ्गीतकुशला सेव्या कृष्णवश्यत्वकारिणी॥११॥ तारिणी हारिणी हीला शीला लीला ललामिका। गोपाली दिधिविक्रेत्री प्रौढा मुग्धा च मध्यका॥ १२॥

मत्ता

लिलता लता। विद्युद्वल्ली काञ्चनाभा कुमारी मुग्धवेशिनी॥ ७॥ नवनीतैकविक्रया। षोडशाब्दा कलापूर्णा जारिणी जारसङ्गिनी॥ ८ ॥ हर्षिणी वर्षिणी वीरा धीरा धारा धरा धृति: । यौवनस्था वनस्था च मधुरा मधुराकृति:॥ ९ ॥

खण्डिता याभिसारिका। रिसका रिसनी रस्या रसशास्त्रैकशेवधि:॥१३॥

चोक्ता पालिका लालिका लज्जा लालसा ललनामणिः। बहुरूपा सुरूपा च सुप्रसन्ना महामितः॥१४॥

मन्त्रिणी

मौन होकर परिक्रमा पूर्ण करें। - श्रीराकेश कुमारजी

मानलीलाविशारदा। दानलीला दानदात्री दण्डहस्ता भ्रुवोन्नता॥ १०॥

गोप्या गोपीवेषमनोहरा॥ ३॥

मन्त्रनायिका । मन्त्रराजैकसंसेव्या मन्त्रराजैकसिद्धिदा ॥ १५ ॥ अष्टाक्षरनिषेविता । इत्येतद्राधिकादेव्या नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ॥ १६ ॥

भाग ९३

कृष्णवश्यत्वसिद्धये। एकैकनामोच्चारेण वशीभवति केशवः॥ १७॥ कीर्तयेत्प्रातरुत्थाय Hinduism Discord Server/https://desc:@g//than/mar/y+whAtDE/fw/ITH LOVE BY Avinash/Sh

महाशिवरात्रिपर्वपर पाठ-पारायण एवं स्वाध्याय-हेतु प्रमुख प्रकाशन

संक्षिप्त शिवपुराण, सचित्र (मोटा टाइप) कोड 1468, विशिष्ट संस्करण, सजिल्द — इस पुराणमें परात्पर ब्रह्म श्रीशिवके कल्याणकारी स्वरूपका तात्त्विक विवेचन, रहस्य, मिहमा और उपासनाका विस्तृत वर्णन है। इसमें भगवान् शिवके उपासकोंके लिये यह पुराण संग्रह एवं स्वाध्यायका विषय है। मूल्य ₹२८०, सामान्य संस्करण (कोड 789) मूल्य ₹२३०, गुजराती (कोड 1286) मूल्य ₹२२५, तेलुगु (कोड 975) मूल्य ₹२००, बँगला (कोड 1937) मूल्य ₹१६०, कन्नड (कोड 1926) मूल्य ₹२००, तिमल (कोड 2043) मूल्य ₹३००।

`	, ,	•	`	, ,	`		, ,	
कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹
2020	शिवमहापुराण -मूलमात्रम्	२७५	1343	हर हर महादेव "	२५	1627	रुद्राष्टाध्यायी -सानुवाद	३०
1985	लिङ्गमहापुराण -सटीक	220	1367	श्रीसत्यनारायणव्रतकथा	१५	2155	द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग	४०
1417	शिवस्तोत्ररत्नाकर-सानुवाद	३५	563	शिवमहिम्न:स्तोत्र	٧	2127	शिव-आराधना—	
1899	श्रावणमास-माहात्म्य "	३५	228	शिवचालीसा-पॉकेट साइज	8		पॉकेट साइज (बेड़िआ)	৩
1954	शिव-स्मरण	१०	1185	शिवचालीसा- लघु	2	586	शिवोपासनाङ्क	१५०
1156	एकादश रुद्र (शिव) - चित्रकथा	40	1599	श्रीशिवसहस्र नामावलि	१०	635	शिवाङ्क	200
0204	ॐ नमः शिवास ः	26	230	अमोध शिवकतन	×			

चैत्र नवरात्रके अवसरपर नित्य पाठके लिये 'श्रीरामचरितमानस'के विभिन्न संस्करण (६ अप्रैल शनिवारसे नवरात्रारम्भ होगा)

	• •								
कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹				
1389	श्रीरामचरितमानस —बृहदाकार (वि०सं०)	६५०	82	श्रीरामचरितमानस —मझला साइज, सटीक,					
80	🕠 बृहदाकार-सटीक (सामान्य संस्करण)	५५०		[बँगला, गुजराती भी]	१३०				
1095	🕠 ग्रन्थाकार-सटीक (वि०सं०) गुजरातीमें भी	330	1318	🥠 रोमन एवं अंग्रेजी-अनुवादसहित (मझला भी)	300				
81	🕠 ग्रन्थाकार-सटीक, सचित्र, मोटा टाइप,		83	🕠 मूलपाठ,ग्रन्थाकार [गुजराती, ओड़िआ भी]	१३०				
	[ओड़िआ, तेलुगु, मराठी, नेपाली,		84	🕠 मूल, मझला साइज [गुजराती भी]	60				
	गुजराती, कन्नड, अंग्रेजी भी]	२६०	85	🕠 मूल, गुटका [गुजराती भी]	40				
1402	🕠 सटीक, ग्रन्थाकार	200	1544	🕠 मूल, गुटका (विशिष्ट संस्करण)	६०				
2166	,, ग्रन्थाकार-सटीक (सामान्य संस्करण)	१५०	2151	सचित्र रामरक्षास्तोत्रम्—पुस्तकाकार (बेड़िआ)	१५				
1563	n मझला, सटीक (विशिष्ट संस्करण)	१५०		सुन्दरकाण्ड सटीक, मूल पाठ कई आकार-प्रकारमें					
1436	🕠 मूलपाठ, बृहदाकार	300							
	नित्य पाठके लिये 'श्रीदुर्गासप्तशती'के विभिन्न संस्करण								
		3 ,							
1567	श्रीदुर्गासप्तशती—मूल, मोटा टाइप (बेड़िआ)	५०	866	श्रीदुर्गासप्तशती—केवल हिन्दी	22				
876	🕠 मूल, गुटका	१५	1161	'' '' मोटा टाइप, सजिल्द	५५				
1346	<mark>,, सानुवाद, मोटा टाइप</mark>	४०	1774	देवीस्तोत्ररत्नाकर	४०				
1281	<mark>,, सानुवाद (राजसंस्करण)</mark>	<i>५</i> ५		श्रीदुर्गाचालीसा एवं विन्ध्येश्वरीचालीसा					
489	·/ सजिल्द, गुजरातीमें भी	५०							
118	<u>, मानवाट मामान्य टाइप (गाजगती बँगला ओ</u> दिआ भी)	36		कई आकार-प्रकारमें					

कई दिनोंसे अनुपलब्ध ग्रंथ—अब उपलब्ध

शिवाङ्क [ग्रन्थाकार] (कोड 635)—यह विशेषाङ्क शिवतत्त्व तथा शिव-महिमापर विशद विवेचनसिहत शिवचित्र,पूजन, व्रत एवं उपासनापर तात्त्विक और ज्ञानप्रद मार्गदर्शन कराता है। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंका सचित्र वर्णन उसके अन्यान्य महत्त्वपूर्ण (पठनीय) विषय है। मूल्य ₹२००

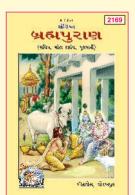
संतवाणी-अङ्क [ग्रन्थाकार] (कोड 667)—संत-महात्माओं और अध्यात्मचेता महापुरुषोंके लोककल्याणकारी उपदेश-उद्बोधनोंका यह बृहत् संग्रह प्रेरणाप्रद होनेसे नित्य पठनीय और सर्वथा संग्रहणीय है। मूल्य ₹२३०



LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2017-2019

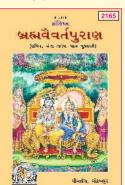
नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार

संo ब्रह्मपुराण (कोड 2169) गुजराती—इस पुराणमें सृष्टिकी उत्पत्ति, पृथुका पावन चरित्र, सूर्य एवं

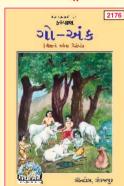


चन्द्रवंशका वर्णन, श्रीकृष्णचरित्र, कल्पान्तजीवी मार्कण्डेय मुनिका चरित्र, तीर्थोंका माहात्म्य एवं अनेक भक्तिपरक आख्यानोंकी सुन्दर चर्चा की गयी है। मूल्य ₹१५०

संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्तपुराण (कोड 2165) गुजराती — इस पुराणमें चार खण्ड हैं — ब्रह्मखण्ड, प्रकृतिखण्ड, श्रीकृष्णजन्मखण्ड और गणेशखण्ड। इसमें भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाओंका विस्तृत वर्णन, श्रीराधाकी गोलोक-लीला तथा अवतार-लीलाका सुन्दर विवेचन, विभिन्न देवताओंकी महिमा एवं एकरूपता और उनकी साधना-उपासनाका सुन्दर निरूपण किया गया है। मूल्य ₹२५०

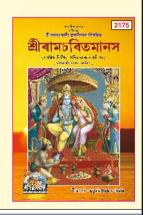


गो-अङ्क (कोड 2176) गुजराती—इस विशेषाङ्कमें सुप्रसिद्ध संत-महात्माओं एवं



विद्वानोंके द्वारा प्रस्तुत गायको महत्ता एवं उपयोगितापर उत्कृष्ट लेखोंके साथ-साथ गायके आर्थिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्वका प्रतिपादन किया गया है। मूल्य ₹२००

श्रीरामचरितमानस [सटीक, ग्रन्थाकार] (कोड 2175) असिमया—श्रीरामचरितमानसका स्थान जगत्के साहित्यमें निराला है। जिस ग्रन्थका जगत्में इतना मान हो, उसका भिन्न-भिन्न भाषाओंमें छपना स्वाभाविक ही है। इसी क्रममें पाठकोंके अनवरत माँगपर श्रीरामचरितमानसका असिमया भाषामें प्रकाशन किया गया है। मृल्य ₹२६०



किल्याण के पाठकोंसे नम्र निवेदन

फरवरी माह सन् २०१९ ई० का अङ्क आपके समक्ष है। यह अङ्क उन सभी ग्राहकोंको भी भेजा गया है, जिनको सन् २०१९ ई० का विशेषाङ्क 'श्रीराधामाधव-अङ्क' वी०पी०पी० द्वारा भेजा गया है, लेकिन उसका भुगतान हमें प्राप्त नहीं हो पाया है। जिन ग्राहकोंकी वी०पी०पी० किसी कारणसे वापस हो गयी है, वे सदस्यता-शुल्क भेजकर रजिस्ट्रीसे पुन: मँगवा सकते हैं अथवा अनुरोध पत्र भेजकर वी०पी०पी० से भी पुन: मँगवा सकते हैं।

जिन ग्राहकोंको सदस्यता-शुल्क भेजनेके उपरान्त भी उनके रुपये यहाँ न पहुँचने अथवा उनके रुपयोंका यहाँ समायोजन आदि न हो सकनेके कारण वी०पी०पी०से अङ्क प्राप्त हो गया है, उनसे अनुरोध है कि वे किसी अन्य व्यक्तिको वह अङ्क देकर ग्राहक बना दें और उनका नाम, पूरा पता, मोबाइल नम्बर तथा अपनी ग्राहक-संख्या आदिका विवरण हमें भेज दें, जिससे उन्हें नियमित ग्राहक बनाकर भविष्यमें 'कल्याण' सीधे उनके पतेपर भेजा जा सके। यदि नया ग्राहक बनाना सम्भव न हो तो पूर्व जमा रकमकी वापसी या समायोजन हेतु e-mail: kalyan@gitapress.org. / 09235400242/244 पर सम्पर्क करना चाहिये। इसके अतिरिक्त 'कल्याण' के विषयमें किसी भी जानकारीके लिये 9648916010 पर SMS एवं WatsApp भी कर सकते हैं।

व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पत्रालय—गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५ (उ०प्र०)